पूर्वांचल खेती

वर्ष : 32 दिसम्बर 2022 अंक : 12

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

पूर्वांचल खेती

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

पूर्वाञ्चल खेती

वर्ष 32 | दिसम्बर 2022 | अंक 12

संरक्षक

डॉ. बिजेन्द्र सिंह

कुलपति

प्रधान सम्पादक

प्रो. ए. पी. राव

निदेशक प्रसार

तकनीकी सम्पादक

डॉ. आर. आर. सिंह

प्राध्यापक, मृदा विज्ञान

मो. नं. 9450938866

सम्पादक मण्डल

डॉ. वी. पी. चौधरी

सहायक प्राध्यापक, पादप रोग

डॉ. पंकज कुमार

सहायक प्राध्यापक, कीट विज्ञान

डॉ. अनिल कुमार

सहायक प्राध्यापक, प्रक्षेत्र प्रबन्ध

सम्पादक

उमेश पाठक

मोबाइल नं. 9415720306

इस पत्रिका में प्रकाशित लेख एवं विचार लेखक के निजी हैं। प्रकाशक/सम्पादक इसके लिए उत्तरदायी नहीं है

विषय सूची

पालक की वैज्ञानिक खेती 01
अखिल कुमार चौधरी एवं धर्मेन्द्र बहादुर सिंह

रबी फसलों में समेकित खरपतवार प्रबंधन 05
सुबोध कुमार एवं देव नारायण सिंह

मालाबार नीमः कृषि वानिकी हेतु उपयुक्त वृक्ष प्रजाति 09
आर. के आनन्द एवं शैलेश कुमार सिंह

उत्तर मैदानी क्षेत्र में स्ट्रॉबेरी की खेती 11
रवि प्रताप एवं लवकुश पांडेय

कृषक आय संवर्धन में फसल अवशेष प्रबंधन का योगदान 12
शैलेन्द्र सिंह एवं नीरज कुमार सिंह

गेहूं के प्रमुख रोग व बचाव 14
राहुल सिंह रघुवंशी एवं डॉ हेमंतकुमार सिंह

प्राकृतिक खेती अपनायें : लागत घटायें 16
उमेश कुमार एवं ए. के. यादव

ढींगरी मशरूम की व्यवसायिक खेती 20
वी0 पी0 चौधरी एवं पंकज कुमार

फूल गोभी में लगने वाले कीट एवं कीट प्रबन्धन 23
गजेन्द्र सिंह एवं विपिन कुमार

भारत में ग्रामीण कृषक महिलाओं का सशक्तिकरण 25
विभा परिहार एवं नमिता जोशी

मछली से बने मूल्यवर्धित उत्पाद एवं रोजगार की संभावनाये 26
प्रदीप कुमार मौर्य एवं लक्ष्मी प्रसाद

ठंड के मौसम में पशुओं का आवास एवं आहार प्रबन्धन 28
कबीर आलम एवं सुशांत श्रीवास्तव

दिसम्बर माह में किसान भाई क्या करें? 30

प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के 31

बॉक्स सूचनाएं

पूर्वाञ्चल खेती पढ़िये, आगे बढ़िये 27

प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

विश्वविद्यालय के कार्य क्षेत्र में स्थापित विभिन्न कृषि विज्ञान/ज्ञान केन्द्र एवं अनुसंधान केन्द्र

क्र. सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	वरिष्ठ वैज्ञानिक/अध्यक्ष/प्रभारी अधिकारी	दूरभाष कार्यालय	मोबाइल
1.	वाराणसी	डॉ. नरेन्द्र रघुवंशी	05542–248019	9415687643
2.	बस्ती	डॉ. एस. एन. सिंह	05498–258201	9450547719
3	बलिया	डॉ. सोमेन्दु नाथ प्रभारी	–	8948044062
4.	फैजाबाद	डॉ. शशिकान्त यादव	05278–254522	9415188020
5.	मऊ	डॉ. एल. सी. वर्मा	0547–2536240	7376163318
6.	चंदौली	डॉ. एस. पी. सिंह	0541–2260595	9458362153
7.	बहराइच	डॉ. विनायक शाही	05252–236650	8755011086
8.	गोरखपुर	डॉ. सतीश कुमार तोमर	–	9415155518
9.	आज़मगढ़	डॉ. डी.के. सिंह	–	9456137020
10.	बाराबंकी	डॉ. शैलेश कुमार सिंह	–	9455501727
11.	महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	–	7839325836
12.	जौनपुर	डॉ. सुरेश कुमार कनौजिया	–	9984369526
13.	सिद्धार्थनगर	डॉ. ओम प्रकाश	05541–241047	9452489954
14.	सोनभद्र	डॉ. पी. के. सिंह	–	9415450175
15.	बलरामपुर	डॉ. एस. के. वर्मा	–	9450885913
16.	अम्बेडकरनगर	डॉ. रामजीत	–	9918622745
17.	संतकबीरनगर	डॉ. अरविन्द सिंह	–	9415039117
18.	अमेठी	डॉ. रतन कुमार आनन्द	–	9838952621
19.	बहराइच (नानपारा)	डॉ. के. एम. सिंह	–	9307015439
20.	मनकापुर–गोण्डा	डॉ. पी.के. मिश्रा प्रभारी	–	9936645112
21.	बरासिन–सुल्तानपुर	डॉ. वी.पी. सिंह	–	9839420165
22.	अमिहित–जौनपुर	डॉ. संजीत कुमार	–	9837839411
23.	गाजीपुर	डॉ. आर. सी. वर्मा	–	9411320383
24.	श्रावस्ती	डॉ. आर.पी.एस. रघुवंशी	–	9415533739
25.	आजमगढ़ द्वितीय	डॉ. डी.के. सिंह	–	9456137020

विश्वविद्यालय के कृषि ज्ञान केन्द्र

क्र.सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाष कार्यालय
1.	अमेठी	डॉ. ए. पी. राव.	9415720376	–
2.	गोण्डा	डॉ. ए. पी. राव	9415720376	–
3.	देवरिया	डॉ. ए. पी. राव	9415720376	–
4.	गाजीपुर	डॉ. ए. पी. राव	9415720376	–

विश्वविद्यालय के अनुसंधान केन्द्र

क्र.सं.	कृषि अनुसंधान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाष कार्यालय
1.	मसौधा, फैजाबाद	डॉ. डी. के. द्विवेदी	7706884188	05278–254153
2.	तिसुही, मिर्जापुर	डॉ. पी. के. सिंह	9415450175	05442–284263
3.	बसुली, महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	9451430507	–
4.	घाघरा घाट, बहराइच	डॉ. नितेन्द्र प्रकाश	9026289336	0525–235205
5.	बड़ा बाग, गाजीपुर	डॉ. सी. पी. सिंह	9628631637	–
6.	बहराइच	डॉ. एस. के. सिंह	8787289358	0548–223690

प्रो. ए. पी. राव
निदेशक प्रसार

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या-224 229 (उ.प्र.), भारत
टेलीफैक्स : 05270-262821
फैक्स : 05270-262821

सम्पादकीय

लाभकारी कृषि के साथ रसायन मुक्त कृषि उत्पादन हमारे सामने एक चुनौती बनकर सामने है। रसायनिक उर्वरकों व दवाओं के भरोसे खेतों से प्रति इकाई अधिकाधिक उत्पादन प्राप्त करने के प्रयास जैसे तैसे सफल हो रहे थे इस बीच मानव स्वास्थ्य के नजरिये से जैविक व प्राकृतिक खेती के प्रसार पर कृषकों का ध्यान आकृष्ट किया जा रहा है। खेती की इस व्यवस्था में कृषि उत्पादन थोड़ा प्रभावित हो सकता है परन्तु उत्पादों की गुणवत्ता विशेष होने से इनके बाजारी मूल्य में आशातीत बढ़ोत्तरी कृषक भाईयों को प्राप्त हो सकती है।

फिलहाल गुणवत्तायुक्त कृषि उत्पाद व सामान्य कृषि उत्पाद के क्रेता के रूप में उपभोक्ताओं के दो समूह बाजार में मौजूद हैं। इन परिस्थितियों का लाभ लेते हुए जैविक व प्राकृतिक खेती को हम बढ़ावा दे सकते हैं। मैं किसान भाईयों से आहवान करता हूं कि वे कम लागत की प्राकृतिक खेती को अपनायें तथा न्यूनतम लागत में बेहतर आय दिलाने वाले कृषि उत्पादों का उत्पादन कर अपनी सकल कृषि आय में बढ़ोत्तरी प्राप्त करें।

(ए.पी. राव)

पालक की वैज्ञानिक खेती

अखिल कुमार चौधरी* एवं धर्मेन्द्र बहादुर सिंह**

पालक की खेती नगदी फसल के रूप में की जाती है। जिसके सम्पूर्ण भाग का इस्तेमाल सब्जी बनाने में किया जाता है। जिससे खाने से मनुष्य के शरीर में खून की मात्रा में वृद्धि होती है।

पालक की खेती मुख्य रूप से सर्दी के मौसम में की जाती है। इसके पौधे सर्दी के मौसम में अच्छे से विकास करते हैं। पालक की खेती के लिए बलुईदोमट मिट्टी सबसे उपयुक्त होती है। इसकी खेती के लिए भूमि का पी.एच. मान सामान्य होना चाहिए। पालक की खेती भारत में लगभग सभी जगहों पर की जाती है। पालक की खेती में किसान भाई इसकी पत्तियों और बीजों को बेचकर दोहरा मुनाफा कमा सकते हैं।

उपयुक्त मिट्टी—पालक की खेती लगभग सभी तरह की भूमि में की जा सकती हैं। लेकिन जल भराव वाली भूमि इसके लिए उपयुक्त नही होती. क्योंकि इसकी पत्तियां भूमि की सतह के पास फैलकर अपना विकास करती हैं।इसलिए जल भराव होने पर इसकी पैदावार को काफी ज्यादा नुक्सान पहुँचता हैं।पालक की खेती के लिए भूमि का पी.एच. मान 6 से 7 के बीच होना चाहिए।

जलवायु और तापमान—पालक की खेती के समशीतोष्ण जलवायु को सबसे उपयुक्त माना जाता हैं। भारत में इसकी खेती बारिश और सर्दी के मौसम में रबी की फसलों के साथ अगेती और पछेती पैदावार के रूप में की जाती है। सर्दी के मौसम में इसके पौधे अच्छे से विकास करते हैं. पालक का पौधा सर्दियों में पड़ने वाले पाले को भी सहन कर सकता है। गर्मियों के मौसम में भी इसको उगाया जा सकता है।लेकिन गर्मियों के मौसम में इसमें डंठल बहुत जल्द बन जाते हैं। इसके पौधों को बारिश की ज्यादा जरूरत नही होती।

पालक के पौधों को शुरुआत में अंकुरित होने के लिए 20 डिग्री के आसपास तापमान की जरूरत होती है। अंकुरित होने के बाद इसके पौधों को अच्छे से विकास करने के लिए सामान्य तापमान की जरूरत होती है. लेकिन इसके पौधे सर्दियों में न्यूनतम 5 डिग्री और गर्मियों में अधिकतम 30 डिग्री के आसपास तापमान पर भी आसानी से जीवित रहकर विकास कर लेते हैं। और गर्मियों में 30 डिग्री से ज्यादा तापमान होने पर पौधों से डंठल निकलने शुरू हो जाते हैं. जिसका असर इसकी पैदावार पर देखने को मिलता हैं।

उन्नत किस्में—पालक की कई उन्नत किस्में हैं। जिनसे उत्तम पैदावार लेने के लिए इसे अलग अलग जलवायु वाली जगहों पर उगाया जाता है।

अर्काअनुपमा—पालक की ये एक संकर किस्म है, जो कम समय में अधिक कटाई और पैदावार देने के लिए तैयार की गई है। इस किस्म के पौधों बीज रोपाई के लगभग 40 दिन बाद कटाई के लिए तैयार हो जाते हैं. जिनकी प्रत्येक कटाई में औसतन उपज 10 टन प्रति हेक्टेयर पाई जाती है। इसके पौधे की चार से पांच कटाई की जा सकती है।

ऑल ग्रीन—पालक की इस किस्म के पौधों एक समान हरे रंग के होते हैं। जिनके पत्ते चौड़े और मुलायम होते हैं। इस किस्म के पौधों को सर्दियों के मौसम में उगाने के लिए तैयार किया गया है। इस किस्म के पौधे बीज रोपाई के 35 से 40 दिन में कटाई के लिए तैयार हो जाते हैं। इस किस्म के पौधे एक बार कटाई के 15 दिन बाद फिर से कटाई के लिए तैयार हो जाते है। इसके पौधों की 5 से 7 बार कटाई की जा सकती हैं. इसके पौधों पर डंठल देरी से बनते हैं।

पूसा हरित—पालक की इस किस्म के पौधों की पत्तियां बड़ी और गहरे हरे रंग की होती है। इस किस्म के पौधों को सितम्बर माह में उगाकर मार्च माह तक काटा जा सकता हैं।जबकि पर्वतीय क्षेत्रों में इसे पूरे साल भर उगाया जा सकता हैं।

पंजाब ग्रीन—पालक की इस किस्म को पंजाब के

*शोध छात्र, सब्जी विज्ञान विभाग, उद्यान महाविद्यालय, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या, उत्तर प्रदेश

आसपास वाले राज्यों में अधिक उगाया जाता है। इस किस्म के पौधे कम समय में ज्यादा पैदावार देने के लिए जाने जाते हैं। जिनका प्रति हेक्टेयर उत्पादन 35 से 40 टन के बीच पाया जाता है।इस किस्म के पौधे बीज रोपाई के लगभग 30 दिन बाद पहली कटाई के लिए तैयार हो जाते हैं। जिनकी एक बार रोपाई कर 6 से 7 बार कटाई की जा सकती हैं।

पंजाब सिलेक्शन—पालक की इस किस्म के पौधे बीज रोपाई के बाद 40 दिन के आसपास पहली कटाई के लिए तैयार हो जाते हैं। जिनका प्रति हेक्टेयर उत्पादन 25से 30 टन तक पाया जाता है।

हिसार सिलेक्शन23—पालक की इस किस्म को कम समय में अधिक पैदावार देने के लिए तैयार किया गया है। इस किस्म के पौधे बीज रोपाई के लगभग 30 दिन बाद पहली कटाई के लिए तैयार हो जाते हैं. जिनका प्रति हेक्टेयर उत्पादन 35 टन के आसपास पाया जाता है।

जोबनेर ग्रीन—पालक की इस किस्म को हल्की क्षारीय भूमि में उगाने के लिए तैयार किया गया है। इस किस्म के पौधों का प्रति हेक्टेयर उत्पादन 30 टन के आसपास पाया जाता है। जो बीज रोपाई के लगभग 40 दिन बाद पहली कटाई के लिए तैयार हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त पूसा भारती, हाइब्रिडएफ1, एलएस2एफ1संकर, लाल पत्ती पालक, एसएक्सएस संख्या 7, वर्जीनियासेवॉय, आस्ट्रेलियन, पालक नं. 51—16, लाग स्टैंडिंग, बनर्जीजाइंट और अर्लीस्मूथलीफ जैसी बहुत सारी किस्में शामिल हैं।

खेत की तैयारी—पालक की खेती के लिए खेत का साफ और मिट्टी का भुरभुरा होना जरूरी हैं। इसलिए शुरुआत में खेत की तैयारी के दौरान खेत में मौजूद पुरानी फसलों के अवशेषों को खेत से हटाकर नष्ट कर दें। उसके बाद खेत की मिट्टी पलटने वाले हलों से गहरी जुताई कर दें। खेत की जुताई के बाद उसे कुछ दिन धूप लगने के लिए खुला छोड़ दें।और फिर खेत में जैविक खाद के रूप में पुरानी गोबर की खाद को डालकर अच्छे से मिट्टी में मिला दें. इसके लिए खेत की कल्टीवेटर के माध्यम से दो से तीन तिरछी जुताई कर दें। खाद को मिट्टी में मिलाने के बाद खेत में पानी चलाकर उसका पलेव कर दें।पलेव करने के दो से तीन दिन बाद जब मिट्टी की ऊपरी सतह हल्की सूखने लगे तब खेत खेत की फिर से जुताई कर मिट्टी को भुरभुरा बना ले। मिट्टी को भुरभुरा बनाने के बाद खेत में पाटा लगाकर भूमि को समतल बना दें। ताकि खेत में जल भराव की समस्या का सामना ना करना पड़ें।

बीज का उपचार और मात्रा—पालक की रोपाई दो तरीकों से की जाती है। जिसमें मेड़ों पर रोपाई के लिए प्रति हेक्टेयर25 किलो और छिडकाव विधि से रोपाई के लिए 30 से 35 किलो बीज की जरूरत होती है। पालक के बीजों को रोपाई से पहले उपचारित कर लेना चाहिए। बीजों को उपचारित करने के लिए बाविस्टिन या कैप्टान दवा की उचित मात्रा का इस्तेमाल करना चाहिए। इसके अलावा बीजों को दो से तीन घंटे गोमूत्र में भिगोकर भी उपचारित कर सकते हैं।

बीज रोपाई का तरीका और टाइम—पालक के बीजों की रोपाई किसान भाई समतल भूमि में क्यारी और मेड़ बनाकर करते हैं।मेड बनाकर रोपाई के दौरान इसे पंक्तियों में उगाया जाता है। इसके लिए प्रत्येक पंक्तियों के बीच लगभग एक फिट के आसपास दूरी होनी चाहिए. और पंक्तियों में बीजों के बीच 10 से 15 सेंटीमीटर के बीच दूरी बेहतर होती है। मेड पर रोपाई के दौरान इसके बीजों की रोपाई लगभग एक से दो सेंटीमीटर की गहराई में करनी चाहिए। जबकि छिडकाव विधि से रोपाई के दौरान इसके बीजों को समतल भूमि में उचित आकार की क्यारी बनाकर उनमें छिड़क देते हैं। उसके बाद हाथ या दंताली से इसके बीजों को मिट्टी में मिला देते हैं।जिससे बीज एक से डेढ़ सेंटीमीटर नीचे चला जाता है. और बीजों का अंकुरण जल्दी होता है. लेकिन छिडकाव विधि से रोपाई के दौरान अधिक मेहनत की जरूरत होती है।

पालक की रोपाई वैसे तो सम्पूर्ण भारत में पूरे साल भर अलग अलग जगहों पर की जाती है। लेकिन इसकी रोपाई का सबसे उपयुक्त टाइम सितम्बर से लेकर नवम्बर माह तक का होता है। इसके अलावा पालक

को बारिश के मौसम में जुलाई महीने के शुरुआत में भी आसानी से उगा सकते हैं। और पहाड़ी इलाकों में इसकी रोपाई पूरे साल भर की जाती है।

पौधों की सिंचाई—पालक के पौधों को सिंचाई की ज्यादा जरूरत होती है।मेड पर रोपाई के दौरान इसे गीली भूमि में उगाया जाता हैं। इसलिए बीज रोपाई के तुरंत बाद सिंचाई की जरूरत नही होती लेकिन छिडकाव विधि में इसकी रोपाई सुखी भूमि में की जाती हैं। इसलिए बीजों के अंकुरण तक हल्की हल्की सिंचाई करते रहना चाहिए. इसके पौधों को शुरुआत में 5 से 7 दिन के अंतराल में पानी देना चाहिए।

जब पौधे कटाई के लिए तैयार हो जाएँ तब पौधों को हर कटाई के बाद पानी देना चाहिए। गर्मियों के मौसम में इसके पौधों को सप्ताह में दो बार पानी देना चाहिए।और सर्दियों के मौसम में 10 से 12 दिन के अंतराल में पौधों को पानी देना उचित होता है। वही बारिश के मौसम में इसके पौधों को पानी की जरूरत कम होती हैं। इस दौरान पौधों को पानी उनकी आवश्यकता के अनुसार ही देना चाहिए।

उर्वरक की मात्रा—पालक के पौधों को उर्वरक की ज्यादा जरूरत होती है। क्योंकि इसके पौधों की एक बार रोपाई करने के बाद बार बार कटाई की जाती है। इसलिए हर बार पौधे को विकास करने के लिए पर्याप्त मात्रा में उर्वरक की जरूरत होती है। इसके लिए शुरुआत में खेत की तैयारी के वक्त खेत में 15 से 17 गाड़ी पुरानी गोबर की खाद को प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में फैलाकर मिट्टी में मिला दें।

गोबर की खाद के अलावा रासायनिक खाद के रूप में 30 किलो नाइट्रोजन, 40 किलो फास्फोरस और 40 किलो पोटाश की मात्रा को खेत की आखिरी जुताई के वक्त खेत में छिड़ककर मिट्टी में मिला दें।उसके बाद पौधों की प्रत्येक कटाई के बाद लगभग 20 किलो यूरिया का छिड़काव खेत में कर दें. इससे पौधे जल्दी से विकास कर फिर से कटाई के लिए तैयार हो जाते हैं।

खरपतवार नियंत्रण—पालक की खेती में खरपतवार नियंत्रण काफी अहम होता है। क्योंकि इसकी पैदावार पत्तियों के रूप में मिलती हैं। ऐसे में खेत में खरपतवार अधिक मात्रा में होने पर पौधों में कई तरह के कीट रोग लग जाते हैं। जिसका असर इसकी पैदावार पर देखने को मिलता है। पालक की खेती में खरपतवार नियंत्रण प्राकृतिक और रासायनिक दोनों तरीके से किया जा सकता है।

रासायनिक तरीके से खरपतवार नियंत्रण के लिए इसके बीजों की रोपाई के तुरंत बाद पेंडीमेथिलीन की उचित मात्रा का छिडकाव खेत में कर देना चाहिए. जबकि प्राकृतिक तरीके से खरपतवार नियंत्रण के लिए पौधों की हल्की गुड़ाई की जाती है। इसके लिए पालक के पौधों की शुरुआत में दो गुड़ाई की जाती है। जो बीज रोपाई के बाद 15 दिन के अंतराल में की जाती है. उसके बाद पौधों की प्रत्येक कटाई के बाद एक बार गुड़ाई कर देनी चाहिए। इससे पैदावार भी अधिक मिलती हैं।

पौधों में लगने वाले रोग और उनकी रोकथाम—पालक की खेती में कई तरह के रोग देखने को मिलते हैं. जिनमें कीट जनित रोग इसकी पैदावार को काफी ज्यादा नुक्सान पहुँचाते हैं। जिनकी रोकथाम वक्त रहते ना की जाए तो पैदावार को काफी ज्यादा नुक्सान पहुँचता है।

चेपा—पालक की खेती में चेपा का रोग हल्की गर्मी के मौसम में देखने को मिलता है। इस रोग के कीट पौधे की पत्तियों पर आक्रमण कर उनका रस चूसकर उन्हें नष्ट कर देते हैं। इस रोग की रोकथाम के लिए मैलाथियान की उचित मात्रा का छिडकाव करना अच्छा होता है।

पत्ती धब्बा—पालक के पौधों में लगने वाला पत्ती धब्बा का रोग एक फफूंद जनित रोग है। इस रोग के लगने पर पौधों के पत्तियों पर सफ़ेद रंग के धब्बे बन जाते हैं। जो रोग बढ़ने पर आपस में मिलकर बड़े हो जाते हैं।जिससे पौधे की पत्तियां जल्द नष्ट हो जाती है। इस रोग की रोकथाम के लिए बलाईटाक्स की उचित मात्रा का छिडकाव पौधों पर करना चाहिए।

पाउडर मिल्ड्यू—पालक के पौधों में पाउडर मिल्ड्यू

रोग इसकी पैदावार को काफी ज्यादा नुक्सान पहुँचाता हैं। इस रोग के लगने पर शुरुआत में पौधों की पत्तियों पर पीले रंग के धब्बे बन जाते हैं। जो रोग के उग्र स्थिति में आने पर सम्पूर्ण पत्तियों पर फैल जाता है। जिससे पौधा प्रकाश संश्लेषण की क्रिया आसानी से पूर्ण नही कर पता है। और पौधों का विकास रुक जाता है. इस रोग की रोकथाम के लिए पौधों पर नीम के तेल या काढ़े का छिडकाव करना चाहिए।

लीफमाइनर—पालक के पौधों में लगने वाले इस रोग को पर्णसुरंगक के नाम से भी जाना जाता है।इस रोग की वजह से पालक के पौधों की पत्तियों को सबसे ज्यादा नुक्सान पहुँचता हैं। जिससे पौधा विकास करना बंद कर देता है। जिस कारण पौधों से पैदावार कम प्राप्त होती है। इस रोग की रोकथाम के लिए पौधों पर डायमेथोएट या एन्डोसल्फान की उचित मात्रा का छिडकाव करना चाहिए।

बालदार सुंडी—पालक की की खेती में बालदार सुंडी रोग का प्रभाव बारिश के मौसम के बाद दिखाई देता है। इस रोग की सुंडी लाल, काले और पीले रंग की होती है। बालदार सुंडी पालक की पत्तियों को खाकर उन्हें खराब कर देती है। जिसका असर पालक की पैदावार और गुणवत्ता पर पड़ता हैं। इस रोग की रोकथाम के लिए पौधों पर नीम के तेल या सर्फ के घोल का छिडकाव करना चाहिए। इसके अलावा रासायनिक कीटनाशक के रूप में इंडोसल्फान की उचित मात्रा का छिडकाव करना चाहिए।

पत्ती झुलसा—पालक के पौधों में पत्ती झुलसा का रोग फसल को काफी हद तक प्रभावित करता है। इस रोग के लगने पर शुरुआत में पौधे की पत्तियां किनारों पर से पीली दिखाई देती हैं। उसके बाद रोग बढ़ने की स्थिति में पौधों की रोग ग्रस्त पत्तियां पीली पड़कर सूख जाती है। इस रोग की रोकथाम के लिए पौधों पर मेन्कोजेब या बाविस्टिन की उचित मात्रा का छिडकाव करना चाहिए।

स्लेटी धब्बा रोग—पालक की खेती में लगने वाला सलेटी धब्बा का रोग एक जीवाणुजनित रोग है। जो पौधों की पैदावार को काफी ज्यादा नुकसान पहुँचाता है। इस रोग के लगने पर पौधे की पत्तियों पर छोटे गोल आकार के धब्बे बन जाते हैं। जो बीच से स्लेटी और किनारों पर से लाल रंग के दिखाई देते हैं। इस रोग की रोकथाम के लिए पौधों पर कार्बेन्डाजिम या इंडोफिलएम45 की उचित मात्रा का छिडकाव करना चाहिए।

फसल की कटाई—पालक के पौधे बीज रोपाई के लगभग 30—40 दिन के अंतराल में कटाई के लिए तैयार हो जाते हैं। जब इसकी पत्तियों का आकार अच्छा दिखाई देने लगे तब इसकी पत्तियों को तेज़ धार वाले हथियार से भूमि की सतह से कुछ दूरी छोड़ते हुए काट लेना चाहिए। पत्तियों की कटाई के बाद उनका बंडल बनाकर रस्सी से बाँध दे। उसके बाद बंडलों को ठंडे पानी से धोकर बाज़ार में बेचने के लिए भेज दें।पालक की खेती बीज और पत्ती दोनों के लिए की जाती है। जिनका उत्पादन किसान भाई एक बार उगाकर ही ले सकता है। इसके पौधों से बीज तैयार करने के लिए पौधों की तीन से चार कटाई करने के बाद छोड़ देना चाहिए।

उसके बाद जब पौधे पर बीज अच्छे से बनकर तैयार हो जाये तब उन्हें काटकर अलग कर लें।उसके बाद इसके दानो को सुखाकर मशीनों की सहायता से अलग कर लिया जाता है। जिन्हें किसान भाई उचित समय पर बोरे में भरकर बाज़ार में बेच सकता है।

पैदावार और लाभ—पालक की विभिन्न किस्मों के हरे पत्तों की चार से पांच कटाई करने पर 25 टन के आसपास पैदावार प्राप्त होती है। इसके अलावा 10 क्विंटल के आसपास इसके दाने प्राप्त होते हैं। इसकी हरी पत्तियों का बाज़ार भाव 5 रूपये प्रति किलो भी किसान भाई को मिले तो किसान भाई एक बार में आसानी से डेढ़ लाख के आसपास कमाई कर सकता हैं।

रबी फसलों में समेकित खरपतवार प्रबंधन

सुबोध कुमार* एवं देव नारायण सिंह**

विश्व की दूसरी सबसे बड़ी आबादी वाले देश में सबके लिए भरपेट भोजन सुनिश्चित करना एक बड़ी चुनौती है, इसलिए कृषि उपज में वृद्वि करना अत्यंत आवश्यक है। खरपतवार, कीट एवं व्याधियों से हमारी फसलों को लगभग 1 लाख करोड़ रूपये की हानि प्रति वर्ष होती है जिनमें से सर्वाधिक हानि खरपतवारों की उपस्थिति के कारण होती है। खरपतवार फसलों के साथ पोषक तत्व, जल, प्रकाश एवं स्थान आदि के लिए प्रतिस्पर्धा करते है, साथ ही साथ ये फसलों के लिए हानिकारक रोग व कीटों को शरण देकर भी क्षति पहुँचाते है जिससे फसलों की उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। अतः कृषकों को फसलों से भरपूर उपज लेने हेतु उन्नत बीज, संतुलित उर्वरक एवं सिंचाई प्रबन्धन के साथ ही खरपतवारों का सही समय पर नियंत्रण करना भी नितांत जरुरी है। रबी फसलों में पाये जाने वाले मुख्य खरपतवार सारणी–1 में सारणीबद्ध हैं।

समेकित खरपतवारों का नियंत्रण : किसान आमतौर पर कीटों और बीमारियों का तुरंत इलाज करते हैं, लेकिन खरपतवारों को नजरअंदाज कर देते हैं, जिससे उन्हें तब तक बढ़ने दिया जाता है जब तक कि उन्हें हाथ से उखाड़कर नष्ट न किया जा सके। कभी–कभी तो किसान खरपतवारों को पशुओं के चारे के रूप में उपयोग करते है, हालाँकि तब तक खरपतवार फसल को नुकसान कर चुके होते है। फसलों की प्रारंभिक अवस्थाएँ खरपतवारों के प्रति अधिक संवेदनशील होती है, जिस अवस्था में यह प्रतिस्पर्धा सर्वाधिक होती है उसे ''क्रान्तिक अवस्था'' कहते है। यदि इस अवस्था पर खरपतवारों का नियंत्रण नहीं किया गया तो उसकी क्षतिपूर्ति बाद में नहीं की जा सकती है। खरपतवार प्रतिस्पर्धा को आर्थिक नुकसान दहलीज स्तर से नीचे रखने के उद्देश्य से कम करने के लिए कम इनपुट स्तरों पर दो या दो से अधिक खरपतवार नियंत्रण विधियों के संयोजन को ही समेकित खरपतवार प्रबंधन के नाम से जाना जाता है। प्रमुख रबी फसलों में खरपतवारों की क्रान्तिक अवस्था सारणी–3 में दी गई है।

(1) खरपतवार नियंत्रण की निरोधक विधि :

इस विधि में वे क्रियाएँ शामिल है जिनके द्वारा खेत में खरपतवारों को उगने से रोका जा सकता है, जो इस प्रकार है :–

1. खरपतवार बीज रहित बीजों का ही उपयोग करना चाहिए।
2. गोबर की खाद या कम्पोस्ट को अच्छी तरह से सड़ा कर ही प्रयोग करें, जिससे उनमें उपस्थित खरपतवारों के बीजों की अंकुरण क्षमता समाप्त हो जाये।
3. प्रक्षेत्र मशीनों, कृषि यंत्रों का प्रयोग आवश्यक साफ–सफाई के बाद ही करना चाहिये।
4. रोपाई वाली फसलों की पौधाशाला में ही खरपतवारों को उखाड़कर बाहर कर देना चाहिये।
5. खाली पड़ी भूमि, सिंचाई नालियों, नहरों, मेढ़ों तथा सड़को पर खरपतवार न उगने दें।
6. बीज बनने से पहले खरपतवारों को अवश्य नष्ट कर दें।

(2) खरपतवार नियंत्रण की यांत्रिक विधियाँ :

यह विधि खरपतवरों की रोकथाम की सबसे पुरानी, प्रचलित, सरल व प्रभावी विधि है। इस विधि में खरपतवारों की रोकथाम हेतु विभिन्न यंत्रों व मशीनों का प्रयोग किया जाता है। यांत्रिक विधि के अन्तर्गत निम्न क्रियाएँ अपनायी जाती है।

भू–परिष्करण : भू–परिष्करण में फसल की वृद्वि व विकास के लिये आवश्यक सभी कर्षण क्रियाएँ शामिल होती है। यह विधि खरपतवारों की रोकथाम में बहुत ही सहायक है। खेतों में समय पर कर्षण कार्य जैसे जुताई एवं गुड़ाई करने से खरपतवार उखड़कर या टूटकर नष्ट हो जाते है। समय पर जुताई करने से खरपतवारों के बीजों का अंकुरण प्रभावित होता है क्योकि कुछ

*सहायक प्राध्यापक, सस्य विज्ञान विभाग, वीर कुँवर सिंह कृषि महाविद्यालय, डुमराँव (बक्सर), बिहार कृषि विश्वविद्यालय, साबौर – 802136
**सहायक प्राध्यापक, सस्य विज्ञान विभाग, उदय प्रताप महाविद्यालय, वाराणसी – 221002

बीज अधिक गहराई तक चले जाने पर अंकुरण के पश्चात मर जाते है तथा कुछ बीज सूखी मिट्टी में बाहर आ जाते है जिससे पर्याप्त नमी न मिलने पर अंकुरण नहीं होता है। इस विधि के द्वारा वार्षिक तथा बहुवर्षीय खरपतवारों की प्रभावी रोकथाम हेतु जुताई व अन्य भूपरिष्करण क्रियाएँ समय पर करना चाहिये।

निराई–गुड़ाई : यह खरपतवार नियंत्रण की सर्वोतम विधि है। फसलों की प्रारंभिक अवस्था में बुवाई के 15–35 दिन के मध्य का समय खरपतवारों से प्रतियोगिता की दृष्टि से क्रान्तिक समय है परिणामस्वरूप, प्रारंभिक अवस्था में ही फसलों को खरपतवारों से मुक्त करना लाभदायक होता है। बुवाई के 15–35 दिन के मध्य फसल की क्रान्तिक अवस्था के अनुसार खुरपी या कुदाली द्वारा निराई–गुड़ाई करके खरपतवार निकालना चाहिये। इस विधि से न केवल खरपतवार नष्ट होंगें बल्कि मृदा के वायु संचार में भी वृद्वि होगी। इस विधि से कतारों में बोई गई फसलों के खरपतवारों को हैंड हो या अन्य उपकरणों द्वारा भी सफलतापूर्वक नष्ट किया जा सकता है।

(3) खरपतवार नियंत्रण की शस्य विधियाँ :

खेतों की ग्रीष्मकालीन जुताई : इस विधि में सर्वप्रथम हल्की मिट्टी में डिस्क प्लाऊ तथा मध्यम से भारी मिट्टी में मिटटी पलट हल से गर्मियों में खेतों की गहरी जुताई कर खुला छोड़ देते हैं। गर्मियों में अधिक गर्मी से मृदा के तापमान में वृद्वि होती है, जिससे कई खरपतवार सूखकर नष्ट हो जाते हैं तथा उनके बीजों की अंकुरण क्षमता नष्ट हो जाती है और आगामी फसलों में खरपतवार नहीं उगते हैं। कुछ नकारा खरपतवारों जैसे–दूबघास, मोथा व कांस आदि की जड़े व वानस्पतिक भाग खेतों की गहरी जुताई करने से उखड़ कर नष्ट हो जाते है।

बुवाई की विधि व उपयुक्त बीज दर : पंक्तियों में बुवाई करने से पंक्तियों के बीच आसान निराई और अन्य कर्षण कार्यों के साथ–साथ प्रभावी खरपतवार नियंत्रण में मदद मिलती है। पौधों की संख्या पर्याप्त रहती है, और पौधे शुरू से ही उचित रूप से बढ़ते हैं, जिससे खरपतवारों से मुकाबला करने की उनकी क्षमता बढ़ जाती है। क्रॉस–क्रॉस बोने पर गेहूं में खरपतवार कम प्रभावी होते हैं। खरपतवारों की वृद्धि बीज दर और दूरी से भी प्रभावित होती है। फसल सघन होने (अधिक बीज दर) से प्रकाश और हवा को जमीन तक पहुंचने से रोकेगी, और खरपतवारों को बढ़ने से रोकेगी। गेहूँ में कतारों के बीच की दूरी 15 सेमी रखने व बीजदर 125 किग्रा प्रति हे0 प्रयोग करने से खरपतवारों की संख्या बहुत हद तक कम की जा सकती है।

बुआई का समय : फसल को ऐसे समय पर बुआई की जाये कि खरपतवारों के निकलने से पहले ही खेत को ढ़क ले या खरपतवारों को एक बार पहले उगने देवे, फिर जुताई कर नष्ट करने के बाद फसल की बुआई थोड़ी देर बाद करें। अतः परिस्थिति के अनुसार उपयुक्त बुआई के समय में हेर–फेर करने से खरपतवारों से होने वाले नुकसान से बचाया जा सकता है। इससे खरपतवार प्रतिस्पर्धा नहीं कर पायेंगे तथा फसल सरलता से बढ़कर बाद में उगने वाले खरपतवार को हानिकारक नहीं होने देती है।

उपयुक्त फसल–चक्र : उपयुक्त फसल चक्र अपनाना ही खरपतवार नियंत्रण की एक आधारभूत विधि है। फसल–चक्र में फसलों को बदल–बदल कर लेने से खरपतवारों की वृद्वि व प्रजनन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। फसल–चक्र में दलहनी फसलें जैसे चना, मसूर एवं मटर आदि शामिल करने से खरपतवारों पर प्रभाव तो कम होगा साथ ही भू–क्षरण भी बचेगा और मृदा उर्वरकता बढ़ेगी। एक ही फसल को बार–बार खेत में लेने से उस फसल के खरपतवारों का प्रकोप बढ़ जाता है। जैसे एक ही खेत में बार–बार गेहूँ की फसल लेने से बथुआ व गेहूँ का मामा का प्रकोप बढ़ जाता है। अतः ऐसे खेत में विपरीत स्वभाव वाली फसलों को हेरफेर कर उगाने से खरपतवार कम उगते है। जैसे– जिस खेत में गेहूँ का मामा (फेलिरस माइनर) तथा जंगली जई (ऐवेना फटूवा) अधिक हो तो उस खेत में बरसीम या सरसों लगाने से लाभ होता है।

उपयुक्त उर्वरक प्रबंधन : खरपतवार फसलों में दिये गये पोषक तत्वों के लिये प्रतिस्पर्धा करते हैं। यदि उर्वरक उचित समय व विधि से नहीं दिये जाते है तो उर्वरकों का अधिकतम हिस्सा खरपतवार ग्रहण कर लेते हैं और इस स्थिति में अधिक वृद्वि कर फसल को हानि पहुँचाते हैं, अतः उर्वरक छिटकवा विधि की

सारणी–1 : रबी फसलों में पाये जाने वाले मुख्य खरपतवार

फसल	मुख्य खरपतवार
गेहूँ एवं जौ	मंडूसी या गेहूँसा, बथुआ, कृष्णनील, चटरी–मटरी, गेगला, मुनमुना, हिरनखुरी, सैंजी, प्याजी, कंटीली, जंगली जई, मोथा व दूब घास
चना, मटर एवं मसूर	बथुआ, कृष्णनील, चटरी–मटरी, गेगला, हिरनखुरी, गजरी, सैंजी, प्याजी, कंटीली, मोथा व दूब घास
सरसों	ओरोबंकी (भुई फोड़), प्याजी, सैंजी, हिरनखुरी, मोथा व दूब

अपेक्षा कूँड में बीज के नीचे देना उचित रहता है। यदि उपयुक्त विधि से उर्वरक दिया गया हो तो फसल के पौधे प्रारम्भिक लाभ उठा लेते है तथा उर्वरकों के कारण पौधों में वानस्पतिक वृद्वि अधिक होने लगती है और बाद में उगने वाले खरपतवार दब जाते है।

उपयुक्त सिंचाई व्यवस्था : उपयुक्त सिंचाई व्यवस्था खरपतवारों की रोकथाम में सहायक हो सकती है। यदि खरपतवारों को पर्याप्त नमी मिलती है तो यह वृद्वि कर फसल से अधिक प्रतियोगिता करते हैं। सिंचाई विधियां भी खरपतवारों की सघनता को प्रभावित करती है। बूंद–बूंद सिंचाई विधि से सिंचाई करने पर थाला विधि की अपेक्षा खरपतवारों की रोकथाम ज्यादा अच्छी होती है क्योंकि बूंद–बूंद सिंचाई से पानी पौधे की जड़ों के पास दिया जाता है और बाकी का खेत सूखा रहता है, इस तरह से खरपतवार बिना नमी के पनप नहीं पाते हैं।

(4) खरपतवार नियंत्रण की जैविक विधियां :

जीव जंतु जैसे कीट, रोग जीव, शाकाहारी मछली, घोंघे या प्रतिस्पर्धी पौधों का खरपतवार नियंत्रण के लिए उपयोग जैविक नियंत्रण कहलाता है। जैविक नियंत्रण हेतु प्रयोग किये जाने वाले कीट, रोगकारक जीव अदि बायो–एजेंट कहलाते हैं। जैविक नियंत्रण विधि में खरपतवारों को मिटाना संभव नहीं है लेकिन खरपतवारों की संख्या को कम किया जा सकता है। यह विधि सभी प्रकार के खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए उपयोगी नहीं है, हालाँकि यह विधि बाहर से आये खरपतवारों (एलियन वीड्स) पर ज्यादा प्रभावी है।

अच्छे बायो–एजेंट के गुण : 1. बायो–एजेंट को केवल एक लक्षित प्रजाति के पौधों को प्रभावित करने वाला होना चाहिए न कि अन्य उपयोगी पौधों को 2. यह शिकारियों या परजीवियों से मुक्त होना चाहिए। 3. इसे आसानी से पर्यावरण की स्थिति के अनुकूल होना चाहिए। 4. यह खरपतवार को मारने में सक्षम होना चाहिए या कम से कम इसके प्रजनन को किसी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष तरीके से रोकना चाहिए। 5. इसमें प्रजनन क्षमता इतनी होनी चाहिए कि वह अपनी मेजबान प्रजातियों की वृद्धि से आगे निकल सके। लैंटाना कैमरा का क्रोकिडोसेमा लैंटाना नामक कीट के लार्वा द्वारा नियंत्रण, व अमरबेल (कस्कूटा स्पेसीज) का मेलानाग्रोमीज़ा कुस्कुटे नामक मक्खी द्वारा नियंत्रण जैविक खरपतवार नियंत्रण के उत्कृष्ट उदाहरण हैं।

जैव शाकनाशी/कवक शाकनाशी : ये देशी रोगज़नक़ हैं, जिनको कृत्रिम रूप से सुसंस्कृत (संख्या वृद्धि) के बाद शाकनाशी की तरह प्रयोग किया जाता है। पश्चिमी देशों में कुछ पंजीकृत कवक शाकनाशी नीचे सारणीबद्ध हैं।

(5) खरपतवार नियंत्रण की रासायनिक विधियां :

यदि खराब मौसम की स्थिति जैसे लगातार बारिश या श्रमिकों की कमी के कारण श्रमिक अधिक क्षेत्रों से खरपतवार साफ नहीं कर सकते हैं, तो केवल रासायनिक तरीके ही व्यवहार्य हैं। खरपतवारनाशी द्वारा खरपतवार नियंत्रण कम खर्च, कम समय और अधिक क्षेत्र में संभव है। खरपतवारनाशी खरपतवारों को नष्ट करके उनके पुनर्विकास, फूल और बीज उत्पादन को रोकते हैं, जिससे अगले फसल वर्ष में खरपतवारों का प्रकोप कम होता है। खरपतवारनाशक रसायनों का प्रभावी ढंग से उपयोग करने से फसलों को नुकसान से बचाया जा सकता है। विभिन्न फसलों

सारणी–2 : विभिन्न रबी फसलों में फसल–खरपतवार प्रतिस्पर्धा का क्रान्तिक समय

फसल	क्रान्तिक समय (बुआई के बाद दिन)
गेहूँ	30–45
जौ	15–45
चना	30–60
मटर	30–45
मसूर	30–60
सरसों	15–45

सारणी–3 : विभिन्न फसलों में प्रयोग होने वाले खरपतवारनाशी रसायन एवं उनकी प्रयोग विधि की सिफ़ारिश

फसल	खरपतवारनाशी	सक्रिय तत्व मात्रा (ग्रा0/हे0)	व्यापारिक उत्पाद मात्रा (ग्रा0/हे0)	प्रयोग का समय	खरपतवारों का नियंत्रण
गेहूँ	पेन्डीमेथालीन (30 ई0सी0)	1000	3325	अंकुरण से पुर्व	घास एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार
	मेटसल्फूरोन मिथाईल (20 प्रतिशत डब्ल्यू0पी0)	4–6	20–30	बुआई के 30–35 दिन बाद	सिरसियंम आरवेन्स और रूमेक्स सहित केवल चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार
	मैट्रीब्यूजिन (70 प्रतिशत) डब्ल्यू0पी0	150–200	210–280	बुआई के 30–35 दिन बाद	सभी प्रकार के (संकरी व चौड़ी पत्ती वाले) खरपतवार
	सल्फोसल्फयूरान (75 प्रतिशत) डब्ल्यू0पी0	25	33	बुआई के 30–35 दिन बाद	संकरी पत्ती (जंगली जई, गुल्ली डंडा) तथा अन्य चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार
	फिनोक्साप्रोप इथाईल (10 ई0सी0)	100–120	1000–1200	बुआई के 30–35 दिन बाद	घास कुल विशेषकर जंगली जई
	क्लोडीनाफॉप	60	400	बुआई के 30–35 दिन बाद	सभी खरपतवारों का नाश करती है।
चना, मसूर, मटर	फ्लूक्लोरेलिन	1000	2200	बोने से पहले खेत की अंतिम जुताई के समय छिडककर भूमि में अच्छी तरह से मिला दें।	सभी खरपतवारों का नाश करती है।
	पेन्डीमेथालीन (30 ई0सी0)	1000	3325	अंकुरण से पुर्व, बुआई के 1–2 दिन बाद	सैंजि व गाजर घास के अलावा सभी खरपतवारों का नाश करती है।
रेपसीड और सरसों	फ्लूक्लोरेलिन	1000	2200	बोने से पहले खेत की अंतिम जुताई के समय छिडककर भूमि में अच्छी तरह से मिला दें।	सभी खरपतवारों का नाश करती है।
	पेन्डीमेथालीन (30 ई0सी0)	1000	3325	अंकुरण से पुर्व, बुआई के 1–2 दिन बाद	सैंजि व गाजर घास के अलावा सभी खरपतवारों का नाश करती है।
जौ	2–4 डी0 ई0ई0 (34 प्रतिशत डी0सी0)	500	1470	बुआई के 30–35 दिन बाद	चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार
	आइसोप्रोटयूरॉन (50 प्रतिशत डब्ल्यू0पी0)	750–1250	1500–2500	बुआई के 30–35 दिन बाद	संकरी पत्ती वाले खरपतवार (जंगली जई, गुल्ली डंडा)

के लिए खरपतवारनाशियों की सिफ़ारिश सारणी 5 में दर्शायी गयी है।

यह देखा गया है कि कुछ खरपतवारनाशी रसायन बुआई से पहले छिड़ककर मृदा में मिला देने से और बुआई के 20–30 दिन बाद एक बार निराई करने से खरपतवारों से छुटकारा मिलता है। रबी की फसलों में एक बार खरपतवारनाशी दवाई का छिड़काव और एक निराई ही वार्षिक खरपतवारों की रोकथाम के लिए काफी है। खरपतवारनाशी दवाईयों से खरपतवारों की रोकथाम आर्थिक दृष्टि से सस्ती, आसान व बेहतर है।

निष्कर्ष : इस प्रकार, दीर्घकालिक परिप्रेक्ष्य में एकीकृत खरपतवार प्रबंधन सबसे अधिक लाभकारी विकल्प है। यह कम से कम प्रयासों के साथ आर्थिक और पारिस्थितिक लक्ष्यों को प्राप्त करने में मदद करता है और कुछ तकनीकों के उपयुक्त नहीं होने की स्थिति में भी समाधान की पेशकश करता है।

मालाबार नीमः कृषि वानिकी हेतु उपयुक्त वृक्ष प्रजाति

आर. के आनन्द* एवं शैलेश कुमार सिंह**

इस आधुनिक युग में मानव जीवन के लिए संतुलित पर्यावरण बहुत आवश्यक है। वनों की कटाई, पानी की कमी विभिन्न कारकों द्वारा मृदा का क्षरण तथा बढ़ते औद्योगीकरण से पर्यावरण–संतुलन निरंतर बिगड़ता जा रहा है। इसके लिए आवश्यक है कि ऐसी कृषि पद्धति अपनाई जाए जिससे खाद्यान, लकड़ी व चारा इत्यादि की पूर्ति भी हो जाए और पर्यावरण का संतुलन भी बना रहे। इस दिशा मे कृषि वानिकी एक बेहतर विकल्प है।

वर्तमान मे कृषि वानिकी की कई पद्धतियाँ है जिनमे विभिन्न प्रकार के वृक्ष एवं फसलों को एक साथ उगाते है। लेकिन कृषि वानिकी की सबसे बड़ी समस्या वृक्ष घटक का काफी समय बाद उत्पादन देना है। इसके लिए आज आवश्यकता है कि हम तेजी से वृद्धि करने वाले उद्योगों हेतु उपयुक्त वृक्ष प्रजाति अपनाये जो कि कम समय मे, कम लागत मे एवं आसानी से अच्छा आर्थिक लाभ दे सके। मिलिया दूबिया या मालाबार नीम एक महत्वपूर्ण कृषि वानिकी वृक्ष प्रजाति है जिसमे ये सारी खूबियाँ है।

मालाबार नीम तेजी से वृद्धि करने वाला एक महत्वपूर्ण वृक्ष है जिसका वनाष्पतिक नाम मिलिया दूबिया है जो की मिलियेसी कुल के अंतर्गत आता है। साधारण नीम से यह थोड़ा हट कर होता है इसे मिलिया, महानीम या घोडानीम भी कहते है। इसकी खेती उत्तर प्रदेश मे भी की जा रही है। रोपण के दो वर्षों के भीतर, यह लगभग 7–10 मीटर की ऊँचाई और 10–15 सेमी की मोटाई प्राप्त कर लेता है। 5–6 वर्ष के बाद यह काटने योग्य हो जाता है इसी कारण यह वृक्ष इमारती लकड़ी की लगातार बढ़ती मांगों को पूरा कर सकता है। अपने तेजी से विकास के कारण कृषि वानिकी के लिए अत्यधिक उपयुक्त है। इसको कम रखरखाव की आवश्यकता होती है। खराब भूमि में मिलिया दूबिया के रोपण से मिट्टी का पीएच सुधारा जा सकता है और अंततः फसल की उपज में सुधार हो सकता है। इसकी लकड़ी माचिस तीली, फ्लाईवूड, छोटे फर्नीचर, पेंसिल आदि बनाने मे प्रोगोग की जा सकती है, इसीलिए इसके तेज विकास, कई उपयोगों और उच्च आर्थिक लाभ के कारण किसान तेजी से इस वृक्ष को अपना रहे है। इसकी खेती से संबन्धित महत्वपूर्ण तकनीकी बिन्दु निम्नवत है–

भूमि एवं जलवायु

इसकी खेती अत्यधिक ठंढे क्षेत्रों को छोड़ कर लगभग हर प्रकार की जलवायु मे की जा सकती है। इसके लिए 30–32 डिग्री सेंटीग्रेट तापमान सबसे उपयुक्त रहता है। इसको 650–1000 मिलीमीटर वर्षा वाले क्षेत्रों मे उगाया जा सकता है। इसकी खेती के लिए दोमट, काली दोमट, लाल दोमट, जलोढ़ मिट्टी उपयुक्त रहती है।

प्रवर्धन तकनीकी

मिलिया दूबिया को बीज एवं तने की कटिंग दोनों द्वारा प्रवर्धित किया जा सकता है लेकिन बीज द्वारा प्रवर्धन सबसे आसान और सामान्य तरीका है।

बीज द्वारा प्रवर्धनः

जनवरी–फरवरी माह मे इसके लिए पके हुए बीजों को एकत्र किया जाता है, तत्पश्चात मार्च–अप्रैल माह मे नर्सरी बेड या पालीथीन की थैली मे बीज की बोवाई की जाती है। बुवाई से पूर्व बीज को गाय के ताजे गोबर मे 24–36 घंटे के लिए रखने से अंकुरण अच्छा रहता है। नर्सरी बेड या थैली मे पर्याप्त मात्रा मे सड़ी गोबर की खाद होना आवश्यक है। नर्सरी छायादार स्थान पर होना ज्यादा उपयुक्त होता है। 6 माह मे पौधे रोपण योग्य हो जाते है।

*वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र, कठौरा, अमेठी, **वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र, बाराबंकी

तने की कटिंग द्वारा प्रवर्धन

परिपक्व वृक्ष की नयी शाखाओं से 30–40 सेमी लंबी पेंसिल की मोटाई की जुवेनाइल स्टेम कटिंग लेना चाहिए जिसमे कम से कम 3–4 नोड होने चाहिए। पालीथीन बैग मे रोपण से पूर्व कटिंग को 1000–2000 पीपीएम आईबीए हार्मोन से उपचारित करने से अच्छे परिणाम आते है। पोलीथिन बैग में कटिंग लगाने के बाद पर्याप्त नमी होना आवश्यक है।

रोपण तकनीकी

सामान्यतया 6 महीने पुराने पौधों की रोपाई की जाती है। इसको खेत की मेढ़ पर बाउंड्री प्लांटेसन तथा खेत मे ब्लाक प्लांटेसन दोनों रूप मे लगाया जाता है। मेढ़ पर इसे 2.5 से 3.0 मीटर की दूरी तथा खेत मे 3.0 गुणा 3.0 मीटर की दूरी पर रोपित किया जा सकता है। खेत को अच्छी तरह साफ करके उपयुक्त दूरी पर अप्रैल माह मे कम से कम 50 गुणा 50 गुणा 50 सेमी आकार के गड्ढे खोदने के बाद प्रत्येक गड्ढे में 10 किग्रा सड़ी गोबर की खाद एवं 25 ग्राम क्लोरपाईरीफास डस्ट, 50–100 ग्राम डी ए पी एवं गड्ढे की ऊपरी मिट्टी मिलकर भर दें। मानसून की शुरुआत में वृक्षारोपण किया जाना ज्यादा अच्छा रहता है। यदि कृषि वानिकी के अंतर्गत मालाबार नीम की रोपाई की जानी हो तो रोपण दूरी कम से कम 6 गुणा 6 मीटर होना चाहिए।

पौधों का रखरखाव

पौधों के अच्छे विकास के लिए समय समय पर आवश्यकतानुसार खरपतवार नियंत्रण करना हितकर होता है। बरसात के महीनो को छोड़कर कम से कम 18–20 दिन के अंतराल पर पौधों की सिचाई करने से पौधों की अच्छी वृद्धि होती है। मालाबार नीम मे जमीन से 8–10 मीटर की ऊंचाई पर शाखाये आती है। यदि प्रारम्भ से ही नयी शाखाओं की कटाई–छटाई कर दिया जाये तो तना सीधा, गोल, बिना गांठ का रहता है जिसका बाजार मूल्य अच्छा मिलता है।

कटाई, उपज एवं आय

मालाबार नीम की कटाई का समय इसकी उपयोगिता पर निर्भर करता है। सामान्यतया 5–6 वर्ष के बाद इसकी कटाई की जाती है। लेकिन यदि ज्यादा मोटी लकड़ी की आवश्यकता हो तो कटाई 8–10 वर्ष बाद भी की जा सकती है। सामान्य परिस्थितियों मे 6–7 वर्ष के बाद वृक्ष 25–30 सेंटीमेटर व्यास प्राप्त कर लेता है जिससे 5–7 घन फिट लकड़ी प्राप्त ही जा सकती है। 3 गुणा 3 मीटर की दूरी पर रोपाई से प्रति हेक्टयर लगभग 1100 पौधे तयार होते है। इस प्रकार 5–6 वर्ष के बाद एक हेक्टेयर क्षेत्रफल से लगभग 6600–7700 घन फिट लकड़ी प्राप्त की जा सकती है जिससे कम लागत मे लगभग रुपया 180000–210000 प्रति हेक्टेयर प्राप्त किया जा सकता है।

कृषि वानिकी मे मालाबार नीम

कृषि वानिकी के लिए मालाबार नीम काफी उपयुक्त प्रजाति है क्योंकि यह यह काफी तेज वृद्धि करता है तथा इसका फसलों पर अभी तक कोई ज्ञांत एलीलोंपैथिक प्रभाव नहीं है। जमीन पर इसकी पातियाँ गिरने से मिट्टी मे जीवाश्म कार्बन की मात्रा बढ़ती है जिससे फसलों पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। कृषि वानिकी के अंतर्गत मालाबार नीम को कम से कम 6 गुणा 6 मीटर की दूरी पर रोपित करना चाहिए। अच्छे परिणाम के लिए पौधे से पौधे की दूरी घटाकर पंक्ति से पंक्ति की दूरी बढ़ायी जा सकती है। वृक्ष की पंक्तियों को इस प्रकार समायोजित करना चाहिए कि फसलों पर छाया का प्रभाव कम से कम पड़ें। मेढ़ पर रोपाई कि दशा मे दक्षिण दिशा मे रोपाई नहीं करना चाहिए इससे फसलों को सूर्य का प्रकाश बेहतर ढंग से मिलता है। कृषि वानिकी के अंतर्गत मालाबार नीम के साथ कम पानी चाहने वाली फसलें जैसे चना, मटर, मसूर, अलसी, तिल, सरसों, जौ, गेंहू सफलतापूर्वक उगाई जा सकती है। इसके अतिरिक्त प्रारम्भिक वर्षों मे सब्जी एवं उद्यानिक फासले भी उगाई जा सकती है।

इस प्रकार मालाबार नीम आय संवर्धन एवं पर्यावरण संरक्षण हेतु एक उपयुक्त वृक्ष प्रजाति है जो की कम लागत एवं कम देखरेख एवं कम समय मे बेहतर आर्थिक लाभ देती है। इसलिए उत्तर प्रदेश विशेषकर पूर्वाञ्चल मे यदि इसकी खेती की जाये तो किसान भाई अच्छा लाभ प्राप्त कर सकते है।

उत्तर मैदानी क्षेत्र में स्ट्रॉबेरी की खेती

रवि प्रताप* एवं लवकुश पांडेय**

स्ट्रॉबेरी की खेती सर्वप्रथम उत्तर प्रदेश तथा हिमाचल प्रदेश के कुछ पहाड़ी क्षेत्रों में 1960 के दशक से शुरू हुई। पोषक तत्वों के लिहाज से स्ट्रॉबेरी में एंटीऑक्सीडेंट, विटामिन सी तथा खनिज तत्वों में फास्फोरस, पोटेशियम, आयरन तथा कैल्सियम भरपूर मात्रा में पाए जाते हैं। स्ट्रॉबेरी अत्यंत स्वादिष्ट तथा उच्च मूल्य फसल है।आज अधिक उपज देने वाली विभिन्न किस्में, तकनीकी ज्ञान, परिवहन शीत भण्डार और प्रसंस्कण व परिरक्षण की जानकारी होने से स्ट्राबेरी की खेती लाभप्रद व्यवसाय बनती जा रही है। बहुदेशीय कम्पनियों के आ जाने से स्ट्रॉबेरी के विशेष संसाधित पदार्थ जैसे जैम, पेय, कैंडी इत्यादि बनाए जाने के लिये प्रोत्साहन मिल रहा है।

जलवायु

भारत में स्ट्राबेरी की खेती शीतोष्ण क्षेत्रों में सफलतापूर्वक की जा सकती है। मैदानी क्षेत्रों में सिर्फ सर्दियों में ही इसकी एक फसल ली जा सकती है। पौधे अक्टूबर–नवम्बर में लगाए जाते है, जिन्हें शीतोष्ण क्षेत्रों से प्राप्त किया जाता है। यहाँ फल फरवरी–मार्च में तैयार हो जाते है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के क्षेत्रीय केन्द्र शिमला में किये गए शोध यह सिद्ध करते हैं कि दिसम्बर से फरवरी माह तक स्ट्राबेरी की क्यारियाँ प्लास्टिक शीट से ढक देने से फल एक माह हले तैयार हो जाते हैं और उपज भी 20 प्रतिशत अधिक हो जाती है।

भूमि का चुनाव तथा खेत की तैयारी

इसकी खेती हल्की रेतीली से लेकर दोमट चिकनी मिट्टी में की जा सकती है, परन्तु दोमट मिट्टी इसके लिये विशेष उपयुक्त होती है। रेतीली भूमि में जहाँ पर्याप्त सिंचाई के साधन उपलब्ध हों, इसकी खेती की जा सकती है। अधिक लवण युक्त तथा अपर्याप्त जल निकास वाली भूमि इसकी खेती के लिये उपयुक्त नहीं हैं।

हल चलाकर मिट्टी भुरभुरी बना ली जाती है। सतह से 15 सेमी उठी हुई क्यारियों में इसकी खेती अच्छे ढंग से की जा सकती है। पहाड़ी ढलानों में सीढ़ीनुमा खेतों में क्यारियाँ 60 सेमी चौड़ी तथा खेत की लम्बाई स्थिति अनुसार तैयार की जाती है। सामान्यतया 150 सेमी लम्बे तथा 60 सेमी चौड़ी क्यारी में दस पौधे रोपे जाते हैं।

उन्नत किस्में

उन्नत किस्मों में एन आर राउंड हैंड, रैडकोट, कंटराई स्वीट आदि है, जो सामान्यतया छोटे आकार के फल देती है। इनमें अच्छा आकार टोरे तथा एन आर राउंड हैड का ही है जिसके फल का वजन 4–5 ग्राम होता है। आजकल बड़े आकार वाली जातियाँ देश में आयात की जा रही है जिसमें चांडलर, डगलस, गारौला, पजारों, फर्न, ऐडी, सैलवा, ब्राईटन, बेलरूबी, दाना तथा ईटना आदि प्रमुख है।

पौधे लगाने की विधि

पहाड़ी क्षेत्रों में पौधे अगस्त–सितम्बर तथा मैदानी क्षेत्रों में अक्टूबर से नवम्बर तक लगाए जाते हैं। पौधे किसी प्रमाणित व विश्वस्त नर्सरी से ही लिये जाने चाहिए, जिससे इसकी जाति की जानकारी मिले और रोग रहित भी हों। पौधे लगाने से पहले पुराने पत्ते निकाल दिये जाने चाहिए, और एक दो नए उगने वाले पत्ते ही रखने चाहिए। मिट्टी से होने वाले रोगों से बचने के लिये पौधों की जड़ों को एक प्रतिशत बोर्डो मिश्रण या कॉपर आक्सीक्लोराइड (0.2 प्रतिशत) या डाइ थेन एम 45 (0.2 प्रतिशत) के घोल में 10 मिनट तक उपचारित करके छाया में हल्का सुखा लेना चाहिए। क्यारियों में कतार–से–कतार तथा पौधे–से–पौधे का अन्तर 30 सेमी रखा जाता है। पौधा लगाने के समय क्यारियों में लगभग 15 सेमी गहरा छोटा गड्ढा बनाकर पौधा लगाकर उपचारित जड़ों के इर्द–गिर्द को अच्छी तरह दबा दिया है ताकि जड़ों तथा मिट्टी के बीच वायु न रहे। पौधे लगाने के बाद हल्की सिंचाई आवश्यक है।

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन

खाद तथा उर्वरकों की मात्रा मिट्टी की उपजाऊ शक्ति व पैदावार पर निर्भर है। ऐसी क्यारियों में अच्छी तरह गली–सड़ी5–10 किलोग्राम गोबर की खाद और 50 ग्राम उर्वरक मिश्रण – कैन, सुपर फास्फेट और म्युरेट आफ पोटाश 2:2:1 के अनुपात में देने की सिफारिश

(शेष पृष्ठ 13 पर)

*शोध छात्र, फल विज्ञान विभाग, उद्यान महाविद्यालय, चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय नवाबगंज,कानपुर, उत्तर प्रदेश
**शोध छात्र, फल विज्ञान विभाग, उद्यान महाविद्यालय, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या, उत्तर प्रदेश

कृषक आय संवर्धन में फसल अवशेष प्रबंधन का योगदान

शैलेन्द्र सिंह* एवं नीरज कुमार सिंह**

मो० रिजवान अली धान के बाद गेहूं की बुवाई के लिए पारंपरिक तरीको पर ही निर्भर करते थे। पारंपरिक तरीको के खामियों के चलते गेहूं के उत्पादन मे लगातार गिरावट होती जा रही थी। इसके कारण वे काफी परेशान रहते थे तथा उनकी खेती मे रूचि धीरे धीरे कम होने लगी थी। वर्ष 2020 मे वह कृषि विज्ञान केंद्र बहराइच प्रथम के संपर्क मे आये, जहां उनको केंद्र पर संचालित पराली प्रबंधन के बारे मे जानकारी मिली तथा केंद्र के प्रयासों से प्रेरित हो के उन्होंने सुपर सीडर ड्रिल की खरीदकर ना केवल आपने खेतो मे सफल पराली प्रबंधन किया साथ ही आपने क्षेत्र के अन्य किसानो के खेतो मे पराली प्रबंधन कर के अत्तिरिक्त आय अर्जित किया।

व्यावहारिक समस्याएं एवं समाधान

पराली प्रबंधन मो० रिजवान अली के लिए बिलकुल ही नई तकनीक थी। इसको अपनाने मे कई प्रकार की छोटी व बड़ी समस्याओ का सामना करना पड़ा, जैसे – पराली प्रबंधन के लिए उपयुक्त कृषि यन्त्र का चयन, चयनित यंत्र को चलने के लिए उपयुक्त क्षमता वाले ट्रेक्टर का चयन, यंत्रो का सुरक्षित एवं समुचत उपयोग आदि। केंद्र के वैज्ञानिकों के दिशा निर्देशन, समय–समय पर प्रक्षेत्र भ्रमण तथा प्रशिक्षणों से सभी समस्याओ का निदान आसानी से हो गया। इसके अलावा ख़रीदे गए कृषि यन्त्र को मुनाफेदार बनाने के लिए केंद्र के वैज्ञानिकों के परामर्श इनके द्वारा क्षेत्र मे कस्टम हायरिंग पद्धत्ति अपनाते हुए अतरिक्त आय की प्राप्ति की गई।मो० रिज़वान अली, ग्राम घासीपुर, जनपद बहराइच, उत्तर प्रदेश के एक प्रगतिशील किसान हैं। वह पांचवी पास हैं तथा उनके पास लगभग 4 हेक्टेयर जमीन हैं। अपने प्रक्षेत्र पर वह मुख्यतः धान और गेहूं की फसल लेते हैं। इसके साथ ही आलू, सरसो, मक्की और चना भी उगते हैं।

अपनाई गयी प्रौद्योगिकी

कृषि विज्ञान केंद्र, बहराइच – प्रथम से मिली जानकारी के आधार पर, वह केंद्र पर संचालित फसल अवशेष प्रबंधन कार्यक्रम से जुड़े। उन्होंने अपने खेतो मे केंद्र द्वारा उन्नत कृषि यंत्रो का प्रदर्शन किया, जिससे उन्हें उपयुक्त यंत्रो के चयन करने मे मदद मिली। इन यंत्रो के प्रयोग के कारण समय से और कतार मे गेहूं की बुवाई से अधिक उपज हुई, साथ ही फसल अवशेष का खेत मे ही प्रबंधन करने से उर्वरको मे होने वाले खर्च मे भी कटौती देखने को मिली।

केंद्र का योगदान

कृषि विज्ञान केंद्र बहराइच प्रथम जनपद मे कृषि प्रसार मे अग्रणी संस्था हैं। किसानो के लिए नवीनतम एवं उपुयक्त कृषि तकनीकों का प्रचार, प्रशिक्षण और प्रदर्शन केंद्र के प्रमुख उद्देश्य हैं। साथ ही किसानो के खेतो मे कृषि यंत्रो के प्रदर्शन द्वारा किसानो की सहभागिता भी बधाई जाती हैं। केंद्र पर हुए प्रशिक्षण मे किसानो को फसल अवशेषो का रिवर्सेबल मोल्ड बोर्ड हल द्वारा सूखा मिश्रण विधि, रोटावेटर द्वारा गीला मिश्रण एवं जीरो टिल सीड कम फ़र्टिलाइज़र ड्रिल/हैप्पी सीडर/सुपर सीडर द्वारा गेहूं की सीधी बिजाई की विधि का विस्तार से बताया गया। साथ ही इन कृषि पद्धतियों का प्रदर्शन उनके खेतो पर करके जागरूकता बढ़ाई गई। जिसके फलस्वरूप जनपद बहराइच मे पराली जलने के मामलो मे पिछले साल की तुलना मे करीब 62 प्रतिशत की कमी दर्ज की गई हैं। जनपद की प्रगति से प्रभावित होकर, जिलाधिकारी डॉ दिनेश चंद्र जी को नेशनल सिल्वर स्कॉच अवार्ड से भी सम्मानित किया गया है। पराली प्रबंधन अंतर्गत मो० रिज़वान अली ने वर्ष 2021–22 मे गेहूं (डी० बी० डब्ल्यू० 187) का उत्पादन सुपर सीडर ड्रिल मदद से किया साथ ही धान की फसल अवशेष का निस्तारण अपने ही खेत मे किया। इनसे प्रेरित होकर क्षेत्र के किसानो ने करीब 200 हेक्टेयर क्षेत्र पर इन्ही के सुपर सीडर ड्रिल का इस्तेमाल करते हुए गेहूं की बुवाई करवाई जिससे इन्हे रू 3,51,000/– की अतिरिक्त आय की प्राप्ति हुई। इसके लिए केंद्र द्वारा उन्हें गेहूं के उत्तम प्रजाति के बीज भी उपलब्ध करवाया गया। इसके अलावा इनको मे बुआई, सिंचाई, खरपतवार नियंत्रण, रोग एवं कीट नियंत्रण आदि कार्यपद्धतियो के दिशा निर्देश केंद्र के वैज्ञानिकों समय–समय पर दिया। श्री रिज़वान ने आपने 3 हेक्टेयर खेत पर सुपर सीडर द्वारा परली प्रबंधन करते हुए गेहूं की बुवाई

*विषय वस्तु विशेषज्ञ (सस्य विज्ञान), **विषय वस्तु विशेषज्ञ, (कृषि अभियंत्रण), कृषि विज्ञान केन्द्र, बहराइच प्रथम, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या, उत्तर प्रदेश

किया साथ ही आपने बचे 1 हेक्टेयर खेत पर सालभर मे धान, आलू, सरसो, मक्का और उरद की भी फसल उगाई।

लाभ–लागत विवरण

मो० रिज़वान अली को लगभग 32300 रूपये प्रति हेक्टेयर की लागत आयी। गेहूं के उत्पादन से इनको 56474 रुपये प्रति हेक्टेयर का शुद्ध लाभ हुआ। इसी प्रकार गेहूं से पहले धान की फसल पर लगभग 41150 रुपये प्रति हेक्टेयर की लागत आयी तथा 104760 रूपये प्रति हेक्टेयर की शुद्ध आय की प्राप्ति हुई। साथ ही आपने बचे 1 हेक्टेयर खेत पर आलू, सरसो, मक्का और उर्द की खेती से भी अन्य आय की प्राप्ति हुई। इस मॉडल कृषि को आपने कर मो० रिज़वान जी को कुल 524855 रूपये की शुद्ध आय की प्राप्ति हुई। अतः फलस्वरूप सुपर सीडर के कस्टम हायरिंग से इन्हे कुल 351000 रूपये की प्राप्ति हुई साथ ही आपने खेत पर मॉडल कृषि आपने के कुल 524855 रूपये कमाए, जिससे इनकी शुद्ध आय बड़ कर 875855 रूपये हो गई है। श्री रिज़वान जी के कर्मठता को देखते हुए उनको जनपद एवं राज्य स्तरीय कई सम्मानों से सम्मानित भी किया जा चूका है और वे क्षेत्र के किसानो के प्रेरणा स्रोत भी बन रहे है।

(पृष्ठ 11 का शेष)

की जाती है। यह मिश्रण वर्ष में दो बार, मार्च तथा अगस्त माह में दिया जाता है। मैदानी क्षेत्रों में इसकी खेती 60–75 सेमी चौड़ाई वाली लम्बी क्यारियाँ बनाकर, जिसमें दो कतारें लगाई जा सकें, या मेढ़े बनाकर उसी प्रकार की जा सकती है जिस प्रकार टमाटर या अन्य सब्जियाँ उगाई जा सकती हैं।

सिंचाई और देखभाल

स्ट्रॉबेरी के पौधों की जड़ें गहरी होती हैं इसलिये जड़ों के निकट नमी की कमी से पौधों को क्षति हो सकती है और पौधे मर भी सकते हैं। सिंचाई की थोड़ी सी कमी से भी फलों के आकार और गुणवत्ता पर बुरा प्रभाव पड़ता है। स्ट्रॉबेरी की फसल को बार–बार परन्तु हल्की सिंचाई चाहिए। सामान्य परिस्थितियों में शरद ऋतु में 10–15 दिन तथा ग्रीष्म में 5–7 दिन के अन्तराल में सिंचाई आवश्यक है। ड्रिप (बूंद–बूंद) सिंचाई विधि विशेष लाभप्रद है। सिंचाई की मात्रा मिट्टी की अवस्था तथा खेत की ढलानों पर निर्भर रहती है।

स्ट्रॉबेरी की क्यारियों को सूखी घास या काले रंग की प्लास्टिक की चादर से ढकने के विशेष लाभ है। सूखी घास की मोटाई 5–7 सेमी आवश्यक है। विभिन्न अनुसंधान द्वारा यह प्रमाणित किया गया है कि इस विधि द्वारा मिट्टी में अच्छी नमी रहती है, खरपतवार को नियंत्रित रहते हैं, पाले के कुप्रभावों को भी कम करती है और फलों का सड़ना कम हो जाता है। पकने वाले फलों को सूखी घास से ढँकने से पक्षियों द्वारा नुकसान भी कम हो जाता है।

कीट व रोग नियंत्रण

स्ट्राबेरी की खेती को कई कीट व रोग क्षति पहुँचाते हैं। कीटों में तेला, माइट, कटवर्म तथा सूत्रकृमि प्रमुख है। डाइमेथोएट, डिमैटोन, फोरेट का प्रयोग इन्हें नियंत्रण में रखता है। फलों पर भूरा फफूंद रोग तथा पत्तों पर धब्बों वाले रोगों का नियंत्रण डायन कार्बामेट पर आधारित फफूंद नाशक रसायनों के छिड़काव से किया जा सकता है। फल लग जाने के बाद किसी भी फफूंद व कीटनाशक रसायनों का छिड़काव नहीं करना चाहिए। यदि किन्हीं आपात कालीन परिस्थितियों में करना भी पड़े तो छिड़काव विशेष सावधानी से किया जाना चाहिए। तीन वर्ष तक स्ट्राबेरी की खेती करने के बाद खेतों को कम–से–कम एक वर्ष तक खाली रखने या गेहूँ, सरसों, मक्का तथा दलहन फसलों का फसल चक्र अपनाने से कीट, सूत्र–कृमि तथा अन्य रोगों का प्रकोप कम हो जाता है।

तुड़ाई

मैदानी क्षेत्रों में फरवरी के आखिरी सप्ताह से मार्च माह तक फल पकने शुरू हो जाते हैं। पकने के समय फलों का रंग हरे से लाल रंग में बदलना शुरू हो जाता है। फल का आधे से अधिक भाग का लाल रंग होना, तुड़ाई की उचित समय होता है। फलों की तुड़ाई विशेष सावधानी तथा कम गहरी टोकरियों से ही करनी चाहिए। रोगी व क्षतिग्रस्त फलों की छंटनी अवश्य करनी चाहिए। फल तोड़ने के तुरन्त बाद दो घंटे शीत भण्डारण करने से फलों की भण्डारण अवधि बढ़ जाती है।

उपज

स्ट्रॉबेरी की उपज इसकी जाति और जलवायु पर निर्भर करती है। सामान्यतया इसकी उपज 200–500 ग्राम प्रति पौधा मिल जाती है। यद्यपि विदेशों में अधिकतम 900–1000 ग्राम प्रति पौधा ली जा चुकी है।

गेहूं के प्रमुख रोग व बचाव

राहुल सिंह रघुवंशी* एवं हेमंत कुमार सिंह**

गेहूं प्रमुख रबी फसल है। इसकी अधिक पैदावार के लिए उत्तम बीज, सन्तुलित खाद, पानी व उचित रख रखाव आवश्यक है। बढ़ते हुए पौधों पर अनेक विकार व रोग आते हैं। प्रदेश में गेहूं के प्रमुख रोगों के लक्षण व उनसे बचाव इस प्रकार हैं :

भूरा व पत्तों का रतुआः इस रोग से पत्तों पर भूरे रंग के फफोले बिखरे मिलते हैं। ये लक्षण फरवरी के आखिरी पखवाड़े या मार्च के शुरू में दिखाई देने लगते हैं। यह रोग फसल की बढ़वार के साथ बढ़ता जाता है। अधिक प्रकोप से दाने हल्के व सिकुड़ जाते हैं। जिससे पैदावार पर बुरा असर पड़ता है।

बचाव :

- रोग रोधी जैसे डब्ल्यू एच 283, डब्ल्यू एच 1105, डब्ल्यू एच 542,एच डी 2967, डीपीडब्ल्यू 621–50, डब्ल्यू एच 896, डब्ल्यू एच912, डब्ल्यू एच डी 943, डब्ल्यू एच डी 948 व राज 3765 की खेती करें।
- मैनकोज़ेबइन्डोफिल एम–45 या जीनेबडाईथेन ज़ैड–78 का 2 कि.ग्रा. प्रति हैक्टयर की दर से छिड़काव रोग के लक्षण दिखाई देते ही करें तथा आवश्यकता पड़ने पर 10–15 दिन के अंतरालपर 2–3 छिड़काव और करें।

पीला या धारीदार रतुआः इस रोग में फफोले कतारों के रूप में दिखाई देते हैं व उनका रंग पीला होता है। अधिक प्रकोप से तने व बालियां भी रोग ग्रस्त हो जाती हैं। फफोले आपस में मिलकर पीले रंग की धारियां पत्तों व बालियों पर भी बनाते हैं। यह रोग जनवरी के आखिरी सप्ताह में दिखाई देने लगता है जब औसत तापमान 11–15 डिग्री सैं. व नमी अधिक होती है। ठंडे मौसम में यह रोग पौधे की वृवि के साथ बढ़ता जाता है। इस रोग में भी कमज़ोर दाने बनते हैं।

बचाव :

- रोग रोधी किस्मों जैसे डब्ल्यू एच 283, डब्ल्यू एच 1105, डब्ल्यू एच 542,एच डी 2967, डब्ल्यू एच 896, डब्ल्यू एच 912, डब्ल्यू एच डी 943, डब्ल्यूएचडी 948 व राज 3765 की बिजाई करें।
- मैनकोज़ैब (इन्डोफिलएम–45) याडाईथेनज़ैड 78 का 2 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर की दर से बीमारी दिखाई देते ही छिड़काव करें।
- टिल्टप्रोपेकोनाज़ोल का 0.1 प्रतिशत की दर से लक्षण दिखाई देते ही छिड़काव करें।

चूर्णरोग (पाऊडरी मिल्ड्यू)ः पत्तियों पर सफेद या मट मैले रंग के पाऊडर का बनना व इसका पत्तों पर बिखरा हुआ होना मुख्य लक्षण है। यह रोग नीचे वाली पत्तियों से ऊपर वाली पत्तियों की तरफ बढ़ता जाता है। अधिक प्रकोप से पत्तियां सूख जाती हैं और रोग ग्रस्त बालियों के दाने हल्के व सिकुड़े हुए होते हैं। यह रोग नमी व सिंचित क्षेत्रों करनाल, अम्बाला, यमुनानगर, कैथल व कुरूक्षेत्र में अधिक होता है।

बचाव :

- डब्ल्यू एच 283, डब्ल्यू एच 542, डब्ल्यू एच 896 व डब्ल्यू एच912 किस्मों में इस रोग का प्रकोप कम होताहै।
- समय पर सिफारिश की गई किस्मों की पछेती बिजाई न करें।
- रोग को रोकने के लिए घलुनशील गधंक व छिडक़ाव 2–2.5 किला ग्राम 400–500 लीटर पानी में प्रति हेक्टेयर की दर से छिडक़ाव करें।

खुलीकांगियारीः यह रोग प्रदेश के सभी भागों व किस्मों में पाया जाता है। यह बाली अवस्था का रोग है व रोगी बालियों में दानों की जगह काला चूर्ण बन जाता है जो कि इस रोग के बीजाणु हैं और हवा द्वारा रोगी बालियों से उड़ कर स्वस्थ बालियों में बन रहे दानों में पहुंचकर उन्हें रोग ग्रस्त कर देता है। अन्त में बीजाणु के रेशे (माईशिलियम) दानों के अन्दर स्थापित

*शोध छात्र (पादप रोग विभाग) **सह प्राध्यापक (पादप रोग विभाग) आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोधोगिक विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या

हो जाते हैं और ऐसे दाने ऊपर से स्वस्थ दिखाई देते हैं लेकिन अगले वर्ष जब ऐसेदानोंकोबीज के रूपमें खेत में बोया जाता है तो यह रोग दोबारा बालियों के बनते समय दिखाई देता है। अक्सर रोगी पौधों में काले रंग की बालियां निकलने से 3–4 दिन पूर्व गोभ अवस्था सबसे ऊपरी पत्ती (झण्डा पत्ती/फ्लैग लीफ) पीली पड़नी अथवा सूखनी शुरू हो जाती है। झंडा पत्ती का पीलापन अथवा सूखना हमेशा ऊपर से शुरू होकर नीचे की तरफ बढ़ता है। ऐसे पौधों को खेत में आसानी से रोगी बालियां निकलने से पहले पहचानकर खेत से निकाल कर नष्ट किया जा सकता है।

बचाव :

- हमेशा प्रमाणित बीज या रोग रहित बीज का प्रयोग करें।
- इस रोग का एक मात्र कारण रोगी बीज है इसलिए बिजाई से पहले बीज को कार्बोक्सिन (वीटावक्रैस) या बाविस्टिन नामक दवा 2 ग्राम से यारेक्सिल एक ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचार करे।
- यदि मई–जून के महीने में बीज का सौर ताप उपचार किया जाता है तो फिर किसी अन्य उपचार की आवश्यकता नहीं।

पत्तों की कांगियारी: प्रदेश के शुष्क ज़िलों व कुछ किस्मों जैसे सी306 डब्ल्यू एच 147, डब्ल्यू एच 542, पीबीडब्ल्यू 343 में यह रोग अधिक पाया जाता है। रोगी पौधे प्रायः बौने रह जातेहैं। पत्तियों पर नसों के साथ–साथ काले रंग की लम्बी व चमकीली धारियां बन जातीहैं। शुरू मेंये धारिया ं पत्ती की झिल्ली द्वाराढकी रहतीहै। इनके बाद में फट जाने से काले रंग का चूर्ड इधर–उधर बिखरता रहता है जो कि बीज के उपर या खेतो में अगले वर्ष इस रोग का कारण बनता हैं रोगी पौद्यों में पत्तिया टेढ़ी–मेढ़ी या मुड़ जाती हैं और प्रायः बालियां नहीं बनती और अगर बन भी जाएं तो दाने हल्के सिकुड़े व कमज़ोर होते है तथा अकंरुण बहुत कम होता है।

बचाव :

- खुली कांगीयारी वाली दवाओं जैसे रेक्सिल एक ग्राम या कार्बोक्सिन (वीटावैक्स) या बाविस्टिन 2 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचार करें।
- रोग ग्रस्त खेतों में रोग रोधी किस्मों जैसे डब्ल्यू एच 283, डब्ल्यू एच 896 व डब्ल्यू एच 912 की काश्त करें।
- रोग ग्राही खेतों में सी 306, डब्ल्यू एच 147, डब्ल्यू एच 542 व पीबीडब्ल्यू 343 को न बोएं।
- गेहूं की फसल काटने के बाद रोगी खेत में से फसल की जड़ें व झुण्डी आदि इकट्ठा करके जला दें क्योंकि इस रोग के बीजाणु कई सालों तक ज़मीन में जिन्दा रह सकते हैं। अगरहो सके तो रोगी खेतों में कम से कम 2–3 साल तक गेहूं न बोएं।
- रोगी खेतों की मई जून के महीने में गहरी जुताई करने से रोग के बीजाणु काफी हद तक कम हो जाते हैं।

करनालबंट : यह रोग प्रायः प्रदेश के नमी वाले क्षेत्रों जैसे करनाल, अम्बाला, कुरूक्षेत्र, यमुनानगर, पानीपत, कैथल, फरीदाबाद ज़िलों में अधिक पाया जाता है। खड़ी फसल में यह रोग दिखाई नहीं देता और गेहूं निकालने के बाद ही रोगी दाने दिखाई देते हैं जिनका अंदरूनी भाग आंशिक रूप से व कभी–कभी पूर्ण रूप से काले चूर्ण में बदल जाता है वउन से सड़ी हुई मछली जैसी दुर्गन्ध आती है। रोगी दाने फसल की कढ़ाई के समय फूट जाते हैं और इनसे बीजाणु निकलकर बीज की सतह से चिपक जाते हैं व स्वस्थ बीज में भी मिल जाते हैं। जो अगले मौसम में बीमारी फैलाने का कारण बनते हैं।

बचाव :

- रोग रोधी किस्मों जैसे डब्ल्यू एच 896, डब्ल्यू एच 912 व पीबीडब्ल्यू 502 की काश्त करें।
- बीज जनित रोग की रोकथाम के लिए बिजाई से पहले बीज का एक ग्राम रेक्सिल या दो ग्राम थाईरम नामक दवा से प्रति किलोग्राम बीज की दर से बीजोपचार करें। प्रमाणित बीज का प्रयोग करें।
- अगर सम्भव हो तो बीमारी वाले क्षेत्रों में कुछ वर्ष तक गेहूं की जगह गन्ने की काश्त करें।

प्राकृतिक खेती अपनायें : लागत घटायें

उमेश कुमार* एवं ए. के. यादव**

विश्व की बढ़ती हुई जनसंख्या आज की सबसे बड़ी समस्या है। बढ़ती हुई जनसंख्या के साथ एक समस्या और उत्पन्न हो रही है, जो है इस जनसंख्या को भोजन आपूर्ति की समस्या जो दिनो–दिन बढ़ती जा रही है, आज कल मौसम की परिस्थितिया भी खेती और फसलों के लिए अनुकूल नहीं है, जिससे पहले की तरह किसान फसल उत्पादन मे भी सक्षम नहीं है, अपनी फसलों के उत्पादन के लिए किसान रासायनिक खाद, जहरीले कृषि रसायन पदार्थो का उपयोग करने लगे है, जो कि इंसानों के स्वास्थ और मिट्टी दोनों के लिए हानिकारक है। इसी के साथ साथ वातावरण भी प्रदूषित होता जा रहा है स भारत में हरित क्रांति के नाम पर अन्धाधुन्ध रासायनिक उर्वरको, हानिकारक रसायनों, हाइब्रिड बीजों एवं अधिकाधिक भूजल उपयोग से, भूमि की उर्वरा शक्ति, उत्पादन, भूजल स्तर और मानव स्वास्थ्य में निरन्तर गिरावट आयी है। विदेशी तकनीक जैविक खेती (वर्मी कम्पोस्ट, कम्पोस्ट बायोडायनामिक) भी जटिल होने के कारण अन्ततः किसान को बाजार पर ही निर्भर बनाती है। अतः आवश्यकता है ऐसी कृषि पद्धति की जिसमे किसान को बार बार बाजार न जाना पड़े, उत्पादन न घटे, खेत उपजाऊ बने रहें व मानव रोगी न बने– वह है सुभाष पालेकर प्राकृतिक खेती जिसमे खेत के लिए कुछ भी बाजार से नहीं खरीदना, सिर्फ एक देसी गाय पालना है। प्राकृतिक खेती कृषि की प्राचीन पद्धति है। यह भूमि के प्राकृतिक स्वरूप को बनाए रखती है। प्राकृतिक खेती में रासायनिक कीटनाशक का उपयोग नहीं किया जाता है। इस प्रकार की खेती में जो तत्व प्रकृति में पाए जाते है, उन्हीं को खेती में कीटनाशक के रूप में काम में लिया जाता है। प्राकृतिक खेती में कीटनाशकों के रूप में गोबर की खाद, कम्पोस्ट, जीवाणु खाद,पौधों की पत्तियों, फ़सल अवशेष और प्रकृति में उपलब्ध खनिज जैसे– रॉक फास्फेट, जिप्सम आदि द्वारा पौधों को पोषक तत्व दिए जाते हैं। प्राकृतिक खेती में प्रकृति में उपलब्ध जीवाणुओं, मित्र कीट और जैविक कीटनाशक द्वारा फ़सल को हानिकारक जीवाणुओं से बचाया जाता है ।

जीरो बजट प्राकृतिक कृषि प्राकृतिक कृषि के तरीकों का एक समूह तथा एक जमीनी किसान आंदोलन भी है, जो भारत के विभिन्न राज्यों में फैल गया है, जीरो बजट प्राकृतिक कृषि में "शून्य बजट" अवधारणा के अनुसार, किसानों को उर्वरकों और अन्य कृषि कार्यों पर कोई पैसा खर्च नहीं करना पड़ेगा, जीरो बजट प्राकृतिक कृषि अवधारणा के अनुसार 98 प्रतिशत से अधिक पोषक तत्व जिनकी फसलों को आवश्यकता होती है पहले से ही प्रकृति में मौजूद हैं, तथा शेष 1. 5–2 प्रतिशत मिट्टी से लिए जाते हैं ।

जीरो बजट प्राकृतिक कृषि के स्तम्भ :

जीरो बजट प्राकृतिक कृषि मुख्य रूप से 4 स्तंभों पर आधारित है जो इस प्रकार है–

1. जीवामृत गाय के गोबर और मूत्र (देसी नस्लों के), गुड़, दालों के आटे, पानी और खेत के बांध से मिट्टी का किण्वित मिश्रण।
2. बीजामृत देसी गाय के गोबर, मूत्र, पानी, बांध मिट्टी और चूने का मिश्रण।
3. मल्चिंग, या सूखे भूसे या गिरे हुए पत्तों की एक परत के साथ पौधों को ढंकना, मिट्टी की नमी को संरक्षित करने और जड़ों के आसपास के तापमान को 25–32 डिग्री सेल्सियस पर रखता है।
4. वाफासा, (आवश्यक नमी) वायु संतुलन बनाए रखने के लिए पानी उपलब्ध कराना।

*विषय वस्तु विशेषज्ञ (कृषि वानिकी) एवं **विषय वस्तु विशेषज्ञ (जी. पी. बी.) कृषि विज्ञान केन्द्र, लेदौरा, आजमगढ़
आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या, उत्तर प्रदेश

ध्यान देने योग्य बातें :

- प्राकृतिक कृषि में देशी बीज ही प्रयोग ही करें। हाइब्रिड बीजों से अच्छे परिणाम नहीं मिलेगें।
- प्राकृतिक कृषि में भारतीय नस्ल का ही देशी गोवंश ही प्रयोग करें। जर्सी या होलस्टीन हानिकारक है।
- पौधों व फसल की पंकित की दिशा उत्तर दक्षिण हो। दलहन फसलों की सह फसलें करनी चाहिए।
- यदि किसी दूसरे स्थान पर बनाकर खाद (कम्पोस्ट) लाकर खेतों में डाला जायेगा तो मिटटी में पाये जाने वाले सूक्ष्म जीवाणु निष्क्रिय हो जायेंगे। पौधों का भोजन जड़ के निकट ही बनना चाहिए तब भोजन लेने के लिए जड़ें दूर तक जायेगी। लम्बी व मजबूत बनेंगी परिणाम स्वरूप पौधा भी लम्बा व मजबूत बनेगा।

प्राकृतिक खेती की आवश्यकताः

- पिछले कई वर्षों से खेती में काफी नुकसान देखने को मिल रहा है। इसका मुख्य कारण हानिकारक कीटनाशकों का उपयोग है, इसमें लागत भी बढ़ रही है ।
- भूमि के प्राकृतिक स्वरूप में भी बदलाव हो रहे है जो काफी नुकसान भरे हो सकते हैं। रासायनिक खेती से प्रकृति में और मनुष्य के स्वास्थ्य में काफी गिरावट आई है ।
- फसल की पैदावार का (हिस्सा उनके उर्वरक और कीटनाशक में ही चला जाता है। यदि किसान खेती में अधिक मुनाफा या फायदा कमाना चाहता है तो उसे प्राकृतिक खेती की तरफ अग्रसर होना चाहिए ।
- खेती में खाने पीने की चीजे काफी उगाई जाती है जिसे हम उपयोग में लेते है। इन खाद्य पदार्थों में जिंक और आयरन जैसे कई सारे खनिज तत्व उपस्थित होते है जो हमारे स्वास्थ्य के लिए काफी लाभदायक होती है ।
- रासायनिक खाद और कीटनाशक के उपयोग से ये खाद्य पदार्थ अपनी गुणवत्ता खो देते है। जिससे हमारे शरीर पर बुरा असर पड़ता है ।
- रासायनिक खाद और कीटनाशक के उपयोग से जमीन की उर्वरक क्षमता खो रही है। यह भूमि के लिए बहुत ही हानिकारक है और इससे तैयार खाद्य पदार्थ मनुष्य और जानवरों की सेहत पर बुरा असर डाल रहे है ।
- रासायनिक खाद और कीटनाशक के उपयोग से मिट्टी की उर्वरक क्षमता काफी कम हो गई। जिससे मिट्टी के पोषक तत्वों का संतुलन बिगड़ गया है। इस घटती मिट्टी की उर्वरक क्षमता को देखते हुए जैविक खाद उपयोग जरूरी हो गया है ।

प्राकृतिक खेती को अपनाने में चुनौतियाँ :–

1. कुछ कृषि विशेषज्ञों को लगता है कि प्राकृतिक खेती को व्यापक रूप से अपनाने की सिफारिश करना जल्दबाजी होगी क्योंकि इससे पिछले 70 वर्षों में कृषि अनुसंधान और विकास के कठिन–अर्जित ज्ञान और लाभों को भारी नुकसान हो सकता है ।
2. भारत के फसल संरक्षण उद्योग का मूल्य ₹18,000 करोड़ है। प्राकृतिक तरीकों को बढ़ावा देने से उनके संपूर्ण व्यावसायिक पारिस्थितिकी तंत्र के अस्तित्व को ही खतरा होगा ।
3. प्राकृतिक खेती मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार कर सकती है और कीटों के प्रकोप को कम कर सकती है, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि किसान प्रकोप के दौरान रसायनों के बिना प्रबंधन कर सकते हैं ।
4. केंद्र सरकार से सीमित समर्थन : भारत के सतत कृषि पर राष्ट्रीय मिशन को कृषि बजट का केवल 0.8 प्रतिशत प्राप्त होता है ।

किसानों की दृष्टि से लाभ

- भूमि की उपजाऊ क्षमता में वृद्धि हो जाती है ।
- सिंचाई अंतराल में वृद्धि होती है ।
- रासायनिक खाद पर निर्भरता कम होने से लागत में कमी आती है ।

- फसलों की उत्पादकता में वृद्धि ।
- बाज़ार में जैविक उत्पादों की मांग बढ़ने से किसानों की आय में भी वृद्धि होती है स

मिट्टी की दृष्टि से

- जैविक खाद के उपयोग करने से भूमि की गुणवत्ता में सुधार आता है ।
- भूमि की जल धारण क्षमता बढ़ती है ।
- भूमि से पानी का वाष्पीकरण कम होगा ।

पर्यावरण की दृष्टि से

- भूमि के जलस्तर में वृद्धि होती है।
- मिट्टी, खाद्य पदार्थ और जमीन में पानी के माध्यम से होने वाले प्रदूषण में कमी आती है ।
- कचरे का उपयोग, खाद बनाने में, होने से बीमारियों में कमी आती है ।

बेहतर स्वास्थ्य की सुनिश्चित करना

- चूँकि प्राकृतिक खेती में किसी भी कृषि रसायन का उपयोग नहीं किया जाता है, इसलिये स्वास्थ्य जोखिम और खतरे समाप्त हो जाते हैं। साथ ही भोजन में उच्च पोषक तत्त्व होने से यह बेहतर स्वास्थ्य लाभ प्रदान करता है।

रोज़गार सृजन

- प्राकृतिक खेती नए उद्यमों, मूल्यवर्द्धन, स्थानीय क्षेत्रों में विपणन आदि में रोज़गार के सृजन में सहायक है । प्राकृतिक खेती से प्राप्त अधिशेष का निवेश गाँव में ही किया जा सकता है। चूँकि इसमें रोज़गार सृजन की क्षमता है, जिससे ग्रामीण युवाओं का पलायन रुकेगा ।

पशुधन स्थिरता

- षि प्रणाली में पशुधन का एकीकरण प्राकृतिक खेती में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है और पारिस्थितिकी तंत्र के पुनर्चक्रण में मदद करता है। जीवामृत और बीजामृत जैसे इको–फ्रेंडली बायो–इनपुट गाय के गोबर और मूत्र तथा अन्य प्राकृतिक उत्पादों से तैयार किये जाते हैं ।

लचीलापन

- जैविक कार्बन, कम/न्यून जुताई और पौधों की विविधता की मदद से मिट्टी की संरचना में परिवर्तन गंभीर सूखे जैसी चरम स्थितियों में भी पौधों की वृद्धि में सहायक हो सकता है एवं चक्रवात के दौरान गंभीर बाढ़ तथा वायु द्वारा होने वाली क्षति को कम किया जा सकता हैं। मौसम की चरम सीमाओं के खिलाफ फसलों को लचीलापन प्रदान कर प्राकृतिक खेती किसानों पर सकारात्मक प्रभाव डालती है ।

प्राकृतिक खेती के सिद्धांत :

1. पहला सिद्धांत है, खेतों में कोई जुताई नहीं करना, यानी न तो उनमें जुताई करना, और न ही मिट्टी पलटना। क्योंकि धरती अपनी जुताई स्वयं स्वाभाविक रूप से पौधों की जड़ों के प्रवेश तथा केंचुओं व छोटे प्राणियों, तथा सूक्ष्म जीवाणुओं के माध्यम से कर लेती है ।
2. दूसरा सिद्धांत है कि किसी भी तरह की तैयार खाद या रासायनिक उर्वरकों का उपयोग न किया जाए। इस पद्धति में हरी खाद और गोबर की खाद को ही उपयोग में लाया जाता है ।
3. तीसरा सिद्धांत है, निंदाई–गुड़ाई न की जाए। न तो हलों से न शाकनाशियों के प्रयोग द्वारा। खरपतवार मिट्टी को उर्वर बनाने तथा जैव–बिरादरी में संतुलन स्थापित करने में प्रमुख भूमिका निभाते हैं। बुनियादी सिद्धांत यही है कि खरपतवार को पूरी तरह समाप्त करने की बजाए नियंत्रित किया जाना चाहिए ।
4. चौथा सिद्धांत रसायनों पर बिल्कुल निर्भर न करना है। जोतने तथा उर्वरकों के उपयोग जैसी गलत प्रथाओं के कारण जब से कमजोर पौधे उगना शुरू हुए, तब से ही खेतों में बीमारियां लगने तथा कीट–असंतुलन की समस्याएं खड़ी होनी शुरू हुई। छेड़छाड़ न करने से प्रकृति–संतुलन बिल्कुल सही रहता है ।

प्राकृतिक खेती के घटक :

1.जीवामृत–

जीवामृत सूक्ष्म जीवाणुओं का महासागर है, जो पेड़ पौधों के लिए कच्चे पोषक तत्वों को पकाकर पौधों भोजन तैयार करते हैं, जो पौधों की वृद्धि और विकास में सहायता करता है तथा पौधों की प्रतिरक्षा क्षमता को बढ़ाता है जिससे पौधे स्वस्थ बने रहते हैं तथा फसल से अच्छी पैदावार मिलती है। जीवामृत में लाभदायक सूक्ष्म जीव (एजोस्पाइरिंलम, पी.एस.एम. स्यूडोमोनास, ट्राइकोडर्मा ,यीस्ट एवं मोल्ड) बहुतायत में पाये जाते हैं। इसके उपयोग से भूमि में विद्यमान लाभदायक जीवाणु तथा केंचुए भी आकर्षित होते हैं। ये कार्बनिक अवशेषों के सड़ाव में सहायता करते हैं। परिणामतः मुख्य सूक्ष्म पोषक तत्वों, एंजाइम्स एवं हारमोन को संतुलित मात्रा में पौधों को उपलब्ध कराते हैं ।

2.घन जीवामृतः

घन जीवामृत एक अत्यंत प्रभावशाली जीवाणुयुक्त सुखी खाद है जिसे गाय के गोबर में कुछ चीजे मिलाकर बनाया जाता है। घन जीवामृत को बुवाई के समय या सिचाई करने के तीन दिन बाद भी दे सकते हैं।

3. बीजामृत–

बीजामृत का उपयोग बीज बोने के फले तथा नए पौधों की बीज रोपण के दौरान उपचारित किया जाता है, बीजामृत की मदद से नए पौधों की जड़ो को कवक मिटटी से पैदा होने वाली बीमारी और बीजों को बीमारियों से बचाया जा सकता है। बीजामृत बनाने के लिए गाय का गोबर, एक शक्तिशाली प्राकृतिक कवक नाशक, गाय मूत्र एंटी बैक्टीरियल तरल, नीबू और मिटटी का इस्तेमाल किया जाता है।

फसल सुरक्षा–

आज के समय में रासायनिक खेती के चलन के चलते रासायनिक उर्वरको का भी अंधाधुन रूप से उपयोग किया जा रहा है । क्या आप जानते है रासायनिक कीटनाशकों के उपयोग से जाने अनजाने में हम भरपूर मात्रा में ज़हर का सेवन कर रहे है । जो धीरे धीरे मानव प्रजाति में बड़े पैमाने पर बीमारियों को जन्म दे रहा है ।

रासायनिक उर्वरको के लगातार उपयोग से किसान भाईयों का खर्च तो बढ़ता ही है साथ ही वे अपनी ज़मीन को धीरे धीरे बंज़र करते जा रहे है ।

इन सब समस्याओ का हल बहुत ही आसान है और वह ये है की हम जैविक उर्वरक की तरह ही जैविक कीटनाशक का उपयोग खेती में करे । जैविक कीटनाशक आप अपने घर में ही बिना किसी खर्च के बड़ी आसानी से तैयार कर सकते है। इसी जैविक कीटनाशक में से एक है–नीमास्त्र ।

1.नीमास्त्र :–

नीमास्त्र एक जैविक कीटनाशक है जिसके उपयोग से रस चूसने वाले कीटों और छोटी सुंडियों/ इल्लियों से फसल को बचाया जा सकता है। नीमास्त्र के उपयोग से फसल, मिटटी तथा मानव शरीर को किसी प्रकार का नुकसान नहीं होता ।

2.ब्रह्मास्त्र

ब्रह्मास्त्र का प्रयोग कीट और बड़ी सुंडियों का नियंत्रण करने के लिए किया जाता है ।

3. अग्नि अस्त्र

अग्नि अस्त्र का प्रयोग तना कीट और फलो में होने वाली सुंडियो के नियंत्रण के लिए किया जाता है ,

4 .दशपर्णी अर्क–

सभी तरह के रस चूसने वाले कीट/ सुंडी/ इल्लियो जैसे तेला, चेपा आदि के नियंत्रण के लिए दशपर्णी अर्क का प्रयोग किया जाता है।

ढींगरी मशरूम की व्यवसायिक खेती

वी0 पी0 चौधरी* एवं पंकज कुमार**

आयस्टर मशरूग (प्लूरोटस) को समान्यतः भारत में ढींगरी मशरूम कहते है। इसकी प्रजातियां समशीतोष्ण तथा उपोष्ण क्षेत्रों में उगाने के अनुकूल होती है। आयस्टर मशरूम बैसिडियोमायसीट्स के अन्तर्गत जीनस प्लूरोटस में आता है। इसकी खेती मशरूम की खेती में इस प्रजाति का विश्व में तीसरा स्थान है। कुल विश्व उत्पादन का लगभग 88 प्रतिशत चीन अकेले इस मशरूम को उत्पादित करता है। वर्तमान में भारत में लगभग 10,000 टन प्रतिवर्ष इस मशरूम का उत्पादन किया जाता है। भारत में उड़ीसा कर्नाटक, महाराष्ट्र आन्ध्र प्रदेश, पश्चिम बंगाल, बिहार तथा उत्तर पूर्वी राज्यों मेघालय, त्रिपुरा, मिजोरम एवं आसाम में प्रमुख रूप से उगाया जाता है। इसकी लगभग 38 स्पसीज पूरे विश्व में रिपोर्टेड है। प्लोरोट्स ओलेरियस तथा प्लोरोट्स निडिफार्मिस जो कि जहरीली प्रजाति है, के अलावा इसकी अन्य सभी प्रजातिया खाने योग्य है जिनमें से लगभग 25 स्पसीज की व्यवसायिक खेती सम्पूर्ण विश्व में की जाती है।

लाभ :

1 इसे विभिन्न प्रकार के कृषि फसलों के अवशेषों पर सीधे उगाया जा सकता है। बटन खुम्ब की भॉति खाद (कम्पोस्ट) बनाने की आवश्यकता नहीं होती है।

2 इसे विभिन्न तापगान (15–320c) पर उगा सकते है।

3 इसकी उत्पादन क्षमता (Biological Eficiency 100%) अधिक है।

4 बिमारियों एवं कीटों का प्रकोप अन्य मशरूम की अपेक्षा कम होती है।

5 इसकी बुद्वि तेजी से होती है, फसल अवधि 45–60 दिन का होता है।

6 इसकी उत्पादन विधि आसान है तथा उत्पादन लागत कम है।

7 ग्रामिण क्षेत्रों के लिए अनुकूल प्रजाति है तथा इसकी खेती स्वरोजगार पैदा करने में सहायक है।

8 कटाई उपरान्त प्रोसेसिंग तथा सुखाना (धूप में) आसान है।

कमियॉ :–

1 कुछ लोगों को स्पोर एलर्जी होती है।

2 स्पोरलेस व्यवसायिक स्ट्रेन का अभाव है।

3 देश के कुछ भागों में उपभोक्ता द्वारा सीमित मॉग के साथ–साथ देश में संगठित बाजार की कमी है।

उगाने हेतु आवशयक सामग्री :–

1 कृषि फसल अवशेष मुख्यतयः गेहूँ पुआल आदि का भूसा

2 स्पान (मशरूम बीज)

3 पालीथनी बैग (आकार 45x30 cm., 60x45 cm.)

4 टैंक / ड्रम

5 फार्मलीन / कार्बेन्डाजिम

6 उत्पादन कक्ष बॉस तथा मिट्टी के कम मूल्य लागत वाले उत्पादन कक्ष (आकार 18x15x10 फुट, 20x10x8 फुट)

उत्पादन करने की विधि :–

प्रजाति का चुनाव : भारत में ढिंगरी की कुछ प्रजातियाँ शरद ऋतु में तथा कुछ ग्रीष्म ऋतु में उगाने के लिए उपयुक्त है। सारणी–1 में इन प्रजातियों के तापमान आवश्यकता के आधार पर अपने क्षेत्र की जलवायु को ध्यान में रखकर प्रजाति का चुनाव करना चाहिए।

2 पोषाधार (माध्यम) तैयार करना :

ढींगरी मशरूम की खेती विभिन्न प्रकार के कृषि अवशिष्ट जैसे धान, गेहूँ एवं सभी के भूसे तथा विभिन्न फसलों के तना एवं पत्तियों जैसे मक्का, ज्वार, बाजरा, कपास गन्ने की खोई, सूर्यमुखी का तना प्रयोग की हुई चाय की पत्ती तथा औद्योगिक कचरे जैसे पेपरमिल स्लाज काफी उपोत्पाद पर की जा सकती है। जिन पौधों के अवशिष्ट सख्त तथा लम्बे होते है उन्हे मशीन द्वारा लगभग 2–3 सेमी साइज का काट लिया जाता है। कृषि अवशिष्ट सूखे, ताजे तथा सूक्ष्मजीव फफूँद बैक्टीरिया आदि से संक्रमण सहित होना चाहिए फिर भी गेंहूँ व धान भूंसा ढींगरी की खेती में प्रयोग किये

*विषय वस्तु विशेषज्ञ (फसल सुरक्षा), **विषय वस्तु विशेषज्ञ (कीट विज्ञान) प्रसार निदेशायलय आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौधोगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज आयोध्या

जाने वाले कृषि अवशेषों को हानिकारक सूक्ष्मजीव फफूँद तथा अन्य जीवाणुओं से मुक्त करना पड़ता है, जिसके लिए निम्नानुसार किसी भी विधि द्वारा कृषि अवशेषों (माध्यम) को उपचारित किया जा सकता है।

(क) गर्मपानी उपचार विधि :

इस विधि में कृषि अवशेषों (गेहूँ व धान का भूसा) को छिद्रदार जूट के थैले या बोरे में भरकर रात भर साफ पानी में डुबोकर रखा जाता है तथा अगले दिन भीगे भूसे के बोरे को गर्म पानी (गेहूँ का भूसा 65–70 वब पर 60 मिनट तक तथान धान के भूसे को 85 वब पर 30–35 मिनट) में डुबोकर उपचारित किया जाता है। यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि जब गीले भूसे को गर्म पानी को उपयुक्त तापमान पर लाकर उपरोक्त निर्धारित समय तक गर्म पानी में रखें। इसके बाद गर्म पानी से को निकारलकर पालीथीन सीट पर फैला दें तथा पानी का रिसाव पूरा होने दें। भूसे से पानी निकल जाने (60–70 प्रतिशत नमी) व ठण्डा करने के बाद बीज मिलाया जाता है। यह विधि बृहद स्तर पर व्यवसायिक खेती के लिए उपयुक्त नही है।

(ख) रासायनिक उपचार विधि :

ट्राइकोडर्मा, ग्लायोक्लैडियम, पेनिसिलियम, स्परजिलस तथा डोरैटोमाइसीज की विभिन्न स्पेसीज एवं सामान्य प्रतिस्पर्धात्मक फफूंद यदि ढींगरी मशरूम की खेती के दौरान पोषाधार में रहती है तो स्पान रन की की बृद्वि नहीं हो पाती है फलस्वरूप उपज में कमी होती है अथवा पूरी फसल ही खराब हो जाती है। परन्तु यदि गेहूँ व पुआल के भूसे का रासयनिक उपचार कार्बेन्डाजिम 50ः च ;37ण्5 चचउद्ध एवं फार्मेल्डिहाइड ;500 चचउद्ध के घोल में डुबोकर करते है तो इससे अधिकतर प्रतिस्पर्धात्मक फफूँद या तो मर जाती है या उनकी बृद्वि स्पर्निंग के 25–40 दिन तक नही होती है। इस तकनीक का मानकीकरण मशरूम शोध निदेशालय, सोलन के विजय एवं सोही (1987) द्वारा इस प्रकार है।

(1) एक 200 ली0 क्षमता वाले ड्रम या टब में 90 ली0 पानी लेकर 10–12 किग्रा0 भूसे को पानी में डुबो दिया जाता है तत्पश्चात् एक प्लास्टिक की बाल्टी में कार्बोन्डाजिम 7:5 ग्राम एवं 125 मिली फर्मलीन (37–40 प्रतिशत) को 10 ली0 पानी में मिलाकर घोल को भूसे वाले ड्रम में डाल दिया जाता है तथा ड्रम को पॉलीथीन सीट या ढक्कन से अच्छी तरह बन्द कर दिया जाता है तथा ऊपर से वनज रख देते हैं ताकि भूसा ऊपर न उठे और पानी में डूबा रहे।

2 लगभग 15–18 घंटे बाद उपचारित भूसे को ड्रम से बाहर निकालकर प्लास्टिक सीट या पक्के फर्श या छन्ने पर फैला दिया जाता है। 2–4 घंटे में भूसे से अतिरिक्त पानी निचुड़ जाता है तथा फर्मलीन की गन्ध भी खत्म हो जायेगी।10–12 किग्रा0 सूखा भूसा उपचार के बाद 40–45 किग्रा0 हो जाता है।

अधिक भूसा उपचारित करने के लिए 1000–2000 ली0 क्षमता वाले ड्रम या सीमेन्टेड टैंक का प्रयोग कर सकते है। तथा गणना करके उसी पानी के अनुपात में रसायन को भी मिलाते है।

3 बिजाई :

बिजाई करने से पहले बिजाई कक्ष को 48 घंटे तक 2 प्रतिशत फार्मलीन के घोल से उपचारित कर लेना चाहिए तथा बिजाई करने वाले श्रमिक भी अपने हाथों को भी साफ करके स्प्रिट लगाकर संक्रमण मुक्त कर लेना चाहिए। बिजाई हेतु ताजा तैयार स्पान (20–30 दिन पुराना) अच्छा होता है। स्पान (मशरूम बीज) को 10 प्रतिशत सूखे भूसे के लिए 10 किग्रा0 स्पान की आवश्यकता होती है। प्रति 4 किग्रा0 गीले भूसे में 100 ग्राम बीज अच्छी तरह मिलाकर अथवा लेयर विधि से बिजाई करके पालीथीन की थैलियों के पेंदे में 10–15 (0:5 सेमी से 1:0 सेमी व्यास के) छिद्र बनाकर पालीथीन के मुँह को अच्छी तरह से बन्द कर देते है, जिससे बैग का तापमान 30 डिग्री0 सेन्टीग्रेट से ज्यादा न बढ़ने पाये।

फसल प्रबन्धन :

बिजाई करने के पश्चात् बीजित बैगों को उत्पादन कक्ष में बनाये गये बहुस्तरीय ढाचों (रैक्स पर सटाकर बील फैलाने के लिए रख दिया जाता है। बैगो को उत्पादन कक्ष में रखने के 24 घंटे पहले कक्ष में प्रतिशत फार्मलीन के घोल का छिड़काव कर उत्पादन कक्ष को ढंग से बन्द कर देते है ताकि कक्ष में यदि हानिकारक जावीणु हो तो नष्ट हो जाये। इस उत्पादन कक्ष को बैग रखने के कुछ घंटे पहले खोलते है। बैगों को हफ्ते में एक बार अवश्य देख लेना चाहिए कि बीज फैल रहा है या नहीं। यदि किसी बैग में हरा, काला या नीलें रंग की फफूँद दिखयी दे तो ऐसे बैगों का उत्पादन कक्ष से बाहर निकालकर दूर फेंक देना चाहिए। बीज फैलते समय पानी हवा या प्रकाश की आवश्यकता नही होती। कवक जाल (माईसीलियम) फैलाव के लिए कमरे का तापमान तालिका में दी गयी विभिन्न प्रजातियों के लिए आवश्यक तापमान के आवश्यकतानुसार बनाये रखा जाता है। यदि बैग तथा कमरे का तापमान इससे

ज्यादा बढ़ने लगे तो कमरे की दीवारों तथा छत पर पानी का छिड़काव 2–3 बार करें या एयर कूलर चला दें। इसका ध्यान रखना चाहिए कि बैगों पर पानी जमा न हो। सामान्यतयः बैग का तापमान कमरे के तापमान से 2–4 डिग्री0 सेन्टीग्रेट अधिक होता है, परन्तु अधिकतर माइसीलियम के फैलाव के दौरान पानी का छिड़काव नहीं करना चाहिए और न ही बैग खोलना चाहिए क्योंकि इस समय अधिक आद्रता की जरूरत नही होती है।

लगभग 25–25 दिनों में मशरूम का कवक जाल भूसे की पूरी परत को ढक लेता है जिससे बैग बिल्कुल सफेद दिखायी देने लगता है तब पालीथीन को काटकर हटा देना चाहिए तथा इन्हे बहुस्तरीय ढाचों पर एक दूसरे से 15–20 सेमी0 की दूरी पर रख देते है। पालीथीन हटाने के बाद फलन के लिए कमरे में तथा बैगों पर दिन में 2–3 बार महीन नोजल से पानी का छिड़काव करना चाहिए। कमरे में आवश्यक नमी 75–85 प्रतिशत एवं आवश्यक तापमान (तालिकानुसार) बनाये रखना चाहिए। कमरे में स्वच्छ हवा प्रवेश कराना चाहिए इसके लिये कुछ समय के लिए खिड़कियाँ खोल देना चाहिये या एग्जास्ट पंखों को चलाना तथा छतरी छोटी रह जाती है। ढींगरी मशरूम उत्पादन में नमी व तापमान के अतिरिक्त प्रकाश का भी बहुत महत्व है जो कि फलन शुरू होने के लिए आवशयक होता है। अंधेरा होने पर कलिकाओं का विकास नहीं हो पाता है अतः कमरे में लगभग 6–8 घंटे तक प्रकाश देना चाहिए जिसके लिए खिड़कियों पर शीशा लगा होना चाहिए या कमरे में ट्यूबलाइट या बल्ब का प्रबन्ध होना चाहिए। बैंगो को खेलने के बाद उपरोक्त स्थिति बनाये रखने पर लगभग एक सप्ताह में मशरूम की छोटी–छोटी कलिकायें बनने लगती है जो 4–5 दिनों में पूर्ण आकार ले लेती है। जब छोटी–छोटी कलिकायें पंख का आकार ग्रहण कर किनारे ऊपर की तरफ मुड़ने लगे तो इन्हे तुड़ाई योग्य समझना चाहिए तथा इन्हे अँगूठे तथा तर्जनी अँगुली की सहायक से घड़ी की दिशा में मरोड़कर तोड़ लेना चाहिए। तुड़ाई हमेशा पानी के छिड़काव से पहले करनी चाहिए। पहली फसल के 7–8 दिन बाद दूसरी फसल निकलती है तथा इसके उपरान्त बैग से मशरूम का उत्पादन क्रमशः कम होने लगता है इस तरह से कुल 3–4 फसल की तुड़ाई से लगभग 6 सप्ताह में 10 किग्रा0 सूखे भूसे से लगभग 7–8 किग्रा0 मशरूम की पैदावार मिलती है।

6 भण्डारण व उपयोग

ढिंगरी मशरूम की भण्डारण अवधि बटन मशरूम से अधिक होती है। तोड़ने के बाद मशरूम को लगभग 2 घंटे सूती कपड़े पर फैलाकर छोड़ देना चाहिए जिससे कि उसमें मौजूद नमी उड़ जाय। ताजे ढिंगरी मशरूम को छिद्रदार पालीथीन में भरकर रेफ्रिजरेटर में 2–3 दिन तक रखा जा सकता है। ढींगरी को धूप या ओवेन में सुखाकर (2–4 प्रतिशत नमी) अच्छी तरह सीलबन्द करके इस सूखे उत्पाद को 3–4 माह तक भण्डारित किया जा सकता है। ताजे एवं सूखे मशरूम का प्रयोग सब्जी क विभिन्न व्यंजन जैसे ढिंगरी आमलेट, पकौड़ा, बिरयानी इत्यादि बनायी जा सकती है। सूखे हुये मशरूम को पीसकर पाउडर भी बना सकते है जिसका प्रयोग विभिन्न प्रकार के मूल्यवर्धित उत्पाद जैसे बिस्कुट, पापड़ बड़िया चटनी आदि बनाने में किया जा सकता है।

7 उत्पादन एवं लाभ

ढिंगरी मशरूम की खेती एक लाभकारी व्यवसाय है। इसकी खेती का फसल अवधि 45–50 दिन का होता है। इस तरह से एक वर्ष में इसकी 5–6 फसलें आसानी से ली जा सकती है परन्तु हमारे देश में बटन मशरूम की तुलना में ढिंगरी मशरूम की बिक्री का कोई संगठित बाजार न होने के कारण इसकी व्यवसायिक स्तर पर खेती बहुत ही कम है।

उत्पादन : 70–80 किग्रा0 प्रति कु0 भूसे से

उत्पादन व्यय :30–35 रू/–किग्रा मशरूम

बिक्री दर : 70–80 रू/–किग्रा मशरूम

षुद्व लाभ : 40–45 रू/–किग्रा मशरूम

सारणी–1 : ढिंगरी मशरूम की विभिन्न प्रजातियों के उगाने हेतु अनुकूल तापमान

प्रजाति	अनुकूल तापमान (°C)	
	कवक जाल फैलाव हेतु	फलन हेतु
ग्रीष्मकालीन प्रजातियाँ		
प्लोरोट्स फ्लैबिलेटरा	25–30	22–26
फ्लोरिडा, सजोरकाजू	25–30	22–26
प्लोरोट्स सैपिडस	25–30	22–26
प्लोरोट्स इऔस	25–30	22–26
प्लोरोट्स मैमब्रेनेशियरा	25–30	25–29
प्लोरोट्स सिट्रिनोपाइलिट्स	25–30	24–28
शरदाकलिन प्रजातियाँ		
प्लोरोट्स औसट्रिएट्रा	25–30	20–22
प्लोरोट्स फ्लोरिडा	25–30	18–22
प्लोरोट्स कोर्नोकोपई	25–30	18–22
प्लोरोट्स फौस्यूलेट्रा	18–22	16–20
प्लोरोट्स ऐरिजाई	18–22	14–18

फूल गोभी में लगने वाले कीट एवं कीट प्रबन्धन

गजेन्द्र सिंह* एवं विपिन कुमार**

हमारे देश में विभिन्न प्रकार की सब्जियॉ उगायी जाती है। जिसमें फूल गोभी की सब्जी सम्पूर्ण भारत में बडे पैमाने पर खरीफ एवं रबी में उगायी जाती है। सर्दी के मौसम की सब्जियों में फूल गोभी का प्रमुख स्थान है। इसमें विटामिन एवं प्रोटीन पर्याप्त मात्रा में होती है। सब्जी के अलावा इसका उपयोग सूप तथा अचार बनाने के लिए भी किया जाता है। जिसमें फूल गोभी की खेती एक नकदी फसल है, इसकी व्यवसायिक खेती कर अधिक लाभ कमाया जा सकता है। फूल गोभी की उचित पैदावार के लिए ठण्डी नम जलवायु की आवश्यकता होती है। यह अधिक ठंड या गर्मी सहन नहीं कर पाती है। शुष्क मौसम और कम नमी भी फसल के लिए अनुकूल नहीं हैं। फूल आने के समय अधिक तापमान होने से फूल पीले पड़ जाते हैं तथा उसके बीच छोटी–छोटी पत्तियाँ उग आती हैं। बदलते मौसम एवं जलवायु के कारण लगातार इसके उत्पादन में कमी होती जा रही है। जोकि मुख्यतः कीट द्वारा होता है। इनको नियंत्रण करना अति आवश्यक है। अतिएव इसके नियंत्रण के लिए आईपीएम पद्धति का चुनाव कर कम लागत में कीटों का प्रबन्धन कर सकते है।

वैज्ञानिक विधि का उपयोग कर अत्याधिक उत्पादन कर सकते है

1.भूमि प्रबन्धन – अच्छी भली प्रकार भूमि में सर्वप्रथम पौधशाला की बुबाई करनी चाहिए।

2. पौधशाला तैयार करने का वैज्ञानिक तरीका – बीजों को सर्वप्रथम कारबेन्डाजिम अथवा विराम से 2 ग्राम प्रति किलोग्राम की दर से उपचारित करें। यह प्रक्रिया शांय को करनी चाहिए और सुबह उन उपचारित बीज को गोबर की खाद वाली भूमि पर बुबाई कर दें ।

3. गोबर की खाद– गोबर की खाद पूर्ण रूप से पकी होनी चाहिए और इसके साथ डीएपी एवं एमओपी कुछ मात्रा में डालना चाहिए। गोबर की खाद के साथ कुछ सूक्ष्म तत्व जैसे सल्फर, जिंक, आयरन, मैग्नीज का मिश्रण डालना चाहिए।

नर्सरी तैयार करना– फूल गोभी की पौध तैयार करने के लिए बीजों की बुवाई उठी हुई क्यारियों में की जाती है। क्यारियों के लिए उपजाऊ एवं अच्छे जल निकास वाली भूमि का चयन करना चाहिए। बुवाई से पूर्व बीजों को कैप्टान या थाइरम 2 से 3 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करना चाहिए।

पौध की रोपाई – पौधे की रोपाई 30 दिनों के बाद करनी चाहिए। यह प्रजातियों पर निर्भर करता है कि कौन सी प्रजाति लगा रहे है।

खेत में पौध रोपाई – पौधशाला से पौधे लेकर खेत में रोपाई सायकाल करनी चाहिए ताकि सूर्य की रोशनी से बचाया जा सके । पौधों को लाइन पद्धति से लगाने से पौधे को विकसित होने में उचित स्थान मिल जाता है। किसान भाइयों को अन्तरशस्य करने में सहायता मिलती है।

सिंचाई एवं निराई गुड़ाई : पौधशाला की सिचाई स्प्रेयर से करनी चाहिए। और इसके अतिरिक्त इस पानी में कुछ जैविक जीव जैसे ट्राइकोडर्मा, मेटाराइजियम, बैसिलस थूरिजिएनसिस एवं ब्यूबेरिया बैसियना का छिड़काव करे। पौध लगाने के तुरन्त बाद हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए। बाद में आवश्यकतानुसार समय–समय पर सिंचाई करते रहें। हल्की मिट्टी में 2 से 5 दिन बाद तथा भारी मिट्टी में 8 से 10 दिन बाद सिंचाई करनी चाहिए। खेत में खरपतवार की वृद्धि रोकने के लिए निराई–गुड़ाई करना आवश्यक है। फूल गोभी में लगने वाले प्रमुख कीट–

तम्वाकू की सूंडी

हानि पहुचाने वाली अवस्था – सूंडी

पहचानः– इसकी सूंडी भूरे रंग से गहरे रंग की होती हैं तथा इनके शरीर के किनारो पर गहरी अनुदैर्ध्य पटटी होती हैं। वयस्क कीट भूरे रंग का तथा ऊपरी

*पीएच.डी छात्र कीट विज्ञान, सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, मेरठ

**पीएच.डी छात्र उद्यान, आचार्य

पर सफेद निशान पाये जाते हैं ये पती के हरे पदार्थ को खुरचकर पती के कोमल भाग को खाती हैं।

प्रबन्धन–

- कीट के प्रबन्धन के लिए फेरोमेन ट्रेप का प्रयोग करे।
- सायंट्रानिलिप्रोल 10.8 ओडी 2 मिली प्रति लीटर की दर से छिड़काव करके नियंत्रित करते है।
- स्पाइनोसेड 45 एस.एल. 200–250 मिली हेक्टेयर की दर से छिड़काव करके नियंत्रित करते है।
- एमामेक्टिन बेन्जोएट 5 एस.जी. 500 मिली प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करके नियंत्रित करते है।

गोभी का शिर बेधक कीट– इस कीट की सूंडी गोभी की नई बढती पत्तियो को खाती हैं। जब पौधो का मुख्य भाग नष्ट हो जाता है तो सूंडी के ऊपरी सतह पर आ जाती है तथा पुरानी पत्तियाँ को खाती है।

प्रबन्धनः–

- गोभी का शिर बेधक कीट के नीम तेल 1500 पीपीएम का 5 मिली प्रति लीटर की दर से छिड़काव करके नियंत्रित करते है।
- एमामेक्टिन बेन्जोएट 5 एस.जी. 500 मिली प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करके नियंत्रित करते है।

हीरक पृष्ठ शलभ :

हानि पहुचाने वाली अवस्था – वयस्क

पहचानः– इस कीट के वयस्क मे तीन हीरे के आकार के पीले रंग के धब्बे दोनो उपरी पंखो को मिलाने पर पीछे के तरफ दिखाई देते है। इसलिए इसका नाम हीरक पृष्ठ शलभ है। प्रौढ सूंडी पती को काटकर खाती है जिस कारण पतियो पर सफेद धब्बे हो जाते है।

प्रबन्धन– सर्वप्रथम गर्मियों की ग्रीश्मकालीन जुताई करे और कीट ग्रसित पौधों को निकालकर नश्ट कर दें। जिससे जमीन में छिपे कीट एवं उनकी अन्य अवस्था नष्ट हो जाती है।

- खेत को खरपतवार से मुक्त रखें जिससे कीटों का प्रकोप कम होता है।
- हीरक पृष्ठ शलभ कीट के प्रबन्धन के लिए फेरोमेन ट्रेप का प्रयोग करे।
- बीटी के (बेसिलस थूरीजेंसिस कुर्स्टंकी) 500 मि. ली. प्रति हेक्टेयर के दो छिड़काव करें प्रथम छिड़काव रोपण के 25 दिन बाद एवं दूसरा इसके 10 दिन बाद करें।
- स्पाइनोसेड 45 एस.एल. 200–250 मिली हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।
- एमामेक्टिन बेन्जोएट 5 एस.जी. 500 मिली प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।
- अंतिम छिड़काव फसल काटने के 4 सप्ताह पूर्व करें या प्रोफेनोस 40 ई.सी. 1000–1500 मिली लीटर प्रति हैक्टर या बुलडाक 25 एस.सी. 760–1000 मि.ली. प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव अत्यन्त उपयुक्त पाये गये हैं।
- हीरक तितली हेतु कीटनाशी का महीन बूँदों के रूप में छिड़काव करना उत्तम पाया गया है।

पत्ती भक्षक कीट – इसमें आरा मक्खी, फली बीटल, पत्ती भक्षक लटें, हीरक तितली एवं गोभी की तितली मुख्य हैं। ये कीट पत्तियों को खाकर नुकसान पहुँचाते हैं।

प्रबन्धन – प्रबन्धन हेतु फूल बनने से पूर्व मैलाथियॉन 5 प्रतिशत अथवा कार्बोरिल 5 प्रतिशत के 20 किलो चूर्ण का प्रति हैक्टर की दर से भुरकाव करना चाहिए। फूल बनने के बाद 1.5 मिलीलीटर या एक मिलीलीटर मैलाथियान 50 ई.सी. का प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार छिड़काव 15 दिन के बाद दोहरावें।

चेपा – ये कीट पत्तियों से रस चूसते हैं जिससे पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं। शिशु और वयस्कों दोनों द्वारा पत्तियों, कोमल टहनियों से कोशिका रस चूसकर पत्तियों के मुड़ने, पत्तों के झड़ने और टहनियों के सूखने से नुकसान होता है।

प्रबन्धन – बीटी के (बेसिलस थूरीजेंसिस कुर्स्टंकी) 500 मि.ली. प्रति हैक्टर के दो छिड़काव प्रथम छिड़काव रोपण के 25 दिन बाद एवं दूसरा इसके 10 दिन बाद करें।

- नीम तेल 1500 पीपीएम 5 मि.ली. प्रति ली. पानी की दर से छिड़काव करें।
- इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एसएल 030 मि.ली. प्रति ली. पानी की दर से छिड़काव करें।

भारत में ग्रामीण कृषक महिलाओं का सशक्तिकरण

विभा परिहार* एवं नमिता जोशी**

महिला सशक्तिकरण का अर्थ मात्र महिला का नौकरी या व्यवसाय करना ही नहीं है अपितु महिला को आर्थिक रूप से सशक्त होने के साथ–साथ सामाजिक सामन्जस बैठाने के काबिल भी होना चाहिए। भारत एक कृषि प्रधान देश है। देश की लगभग 80 प्रतिशत आबादी गांवों में निवास करती है। गांवों में जीवकोपार्जन का प्रमुख व्यवसाय कृषि या खेती है। कृषि कार्यों में पुरूषों के अतिरिक्त महिलाओं का भी बहुत बड़ा योगदान है। खेतों में धान, गेहूँ आदि फसलों की बुवाई, कटाई, निराई आदि विविध कार्यों को महिलाओं के बिना सम्पन्न करा पाना पुरूषों के लिए सम्भव नहीं है।

प्रदेश और देश की सरकारें उनके आर्थिक उत्थान के लिए अनेकों योजनायें संचालित कर रही है जिससे कि ग्रामीण कृषक महिलाओं का सशक्तिकरण हो सके। इसके अतिरिक्त स्वय सहायता समूह भी ग्रामीण महिलाओं के जीवन स्तर को ऊँचा करने एवं उनको सशक्त करने का काम कर रहे है।

महिलाओं को ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ कहा जाता है। भारत के सम्पूर्ण आर्थिक तथा सामाजिक विकास में गांवों का अहम स्थान है। हमारे देश की राज्य सरकारें व केन्द्र सरकार कृषक महिलाओं के सशक्तिकरण पर अति संवेदनशील है और इस संबंध में केन्द्र सरकार के स्तर से इस बात के प्रयास किए जा रहे है, कि कृषि कार्यों में लगी महिलाओं की स्थति में तेजी से सुधार हो।

खाद्य और कृषि संगठन के अनुसार भारतीय कृषि में महिलाओं की भागीदारी लगभग 48 प्रतिशत है, जबकि 7.5 करोड़ महिलाएं दुग्ध उत्पादन और पशुधन प्रबन्धन से जुड़ी हैं। एफएओ के आंकड़ों के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाएँ हर साल 3,485 घंटे प्रति हेक्टेयर काम करती हैं। हमारे देश में कृषि विज्ञान केन्द्रों के द्वारा विकास हेतु कृषि कार्यों में लगी महिलाओं के लिए विशेष प्रशिक्षण कार्यकम चलाए जाते हैं। महिलाएं राष्ट्र के विकास में पुरूषों के बराबर ही महत्व रखती हैं। प्रसिद्ध कृषि वैज्ञानिक डा0 स्वामीनाथन के अनुसार विश्व में खेती का सूत्रपात और वैज्ञानिक विकास का प्रारम्भ महिलाओं ने ही किया। कृषि विज्ञान केन्द्रों के द्वारा और अन्य विशेष परियोजनाओं के द्वारा हमारी केन्द्र और राज्य सरकारें कृषक महिलाओं को शिक्षित एवं प्रशिक्षित करने में अहम भूमिका निभा रही है। समय–समय पर प्रशिक्षण कार्यकम भी चलाए जाते हैं। ऐसे प्रशिक्षण कार्यकमों में ग्रामीण कृषक, महिलाओं के स्वास्थ्य संबन्धी एवं उनके बच्चों के स्वास्थ्य को अच्छा रखने एवं अतिरिक्त साथ ही साथ उन्हें कुटीर उद्योगों का वैज्ञानिक प्रशिक्षण दिया जा रहा है।

कृषि महिलाओं को पशुपालन, मछली पालन, चटनी, अचार, मुरब्बे से सम्बन्धित खाद्य संरक्षण एवं प्रशिक्षण, हथकरघा, दस्तकारी जैसे कामों का प्रशिक्षण भी दिया जाता है जिनको सीखकर कृषक महिलायें अपनी आमदनी बढ़ा रही हैं और समाज व देश के विकास में अहम योदान दे रही हैं।

इसके अतिरिक्त यहां यह भी उल्लेख करना अति आवश्यक होगा कि कृषक महिलाएं भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था में छोटे स्वंय सहायता समूह बनाकर कुटीर उद्योगों जैसे–मोमबत्ती बनाना, अगरबत्ती बनाना, सूत कातना, जूट से सामान तैयार करना, लुगदी (कागज) से टोकरे बनाना, पॉटरी आदि के प्रशिक्षण कार्यकमों एवं सिलाई, बुनाई, कढ़ाई इत्यादि कार्यों को करके अपने सामाजिक जीवन में सुधार ला रही हैं और देश की अर्थव्यवस्था की रीढ़ बनी हुई हैं।

स्वंय सहायता समूहों का योगदान स्वयं सहायता समूह समान स्तर की 40 से 20 महिलाओं का एक समूह होता है जिसके सदस्य पारिवारिक उपयोग व एकता जैसे सिद्धान्तों के आधार पर बचत व साख जैसी आर्थिक गतिविधियों की शुरूआत कर सकते हैं।

(शेष पृष्ठ 29 पर)

*सहायक प्राप्यापक टेक्सटाइल एण्ड ऐपरल डिजाइनिंग विभाग, **प्रोफेसर/डीन कम्युनिटी सांइस महाविद्याल, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

मछली से बने मूल्यवर्धित उत्पाद एवं रोजगार की संभावनाये

प्रदीप कुमार मौर्य एवं डॉ लक्ष्मी प्रसाद

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहा पर 70 प्रतिशत ग्रामीण परिवार अभी भी अपनी आजीविका के लिए मुख्य रूप से कृषि पर निर्भर रहती है, जिसमे छोटे और सीमांत किसान प्रमुख है। कृषि में विविधिकरण आज की आवश्यकता है,फसल उत्पादन, पशुपालन, उद्यान एवं वानिकी के अतिरिक्त मत्स्य पालन, शहद उत्पादन, रेशम उत्पादन जैसे कृषि की विधाओ को अपनाने कि आवश्यकता है। उपरोक्त विधाओ से प्राप्त उत्पादों को लम्बे समय तक खाद्य के रूप में प्रयोग करने के लिए हमे इनके प्रसंस्करण पर अधिक जोर देना होगा, जिससे अतिरिक्त उत्पादों की मात्रा को प्रसंस्करित कर लम्बे समय के लिये खाने योग्य अवस्था में रखा जा सके।

मछली की विश्व में 33059 प्रजातिया पायी जाती है, जिसमे भारत में पायी जाने वाले प्रजातियों की संख्या 3231 है, इनमे समुद्री, खारे एवं मीठे पानी की प्रजातिया सम्मिलित है। मत्स्य पालन एवं प्रसंस्करण क्षेत्र देश में लगभग १ करोंड़ 60 लाख लोगो को प्रत्यक्ष एवं अप्रतयक्ष रूप से आय के साधन प्रदान करता है, साथ ही साथ यह क्षेत्र देश को रु . 43717.26 करोड़ विदेशी मुद्रा प्राप्त करने में सहायक है। विगत 1–2 दशको में मत्स्यिकी क्षेत्र देश के विकास में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है, साथ ही साथ यह देश की पोषण की पूर्ति करने में अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो रहा है।

मछलियों में पानी एवं पोषण की अधिकता होने के कारण यह बहुत ही तेजी से ख़राब होने लगती है, इसलिए मछलियों में प्रसंस्करण एवं मूल्यवर्धित विधियो को अपनाकर कम लागत में पोषण युक्त आहार प्राप्त कर सकते है। साथ हि साथ यह मूल्यवर्धित उत्पाद आय का अच्छा श्रोत बन सकता है। हमारे देश में मछलियों की कई प्रजातिया पायी जाती है, यह प्रजातिया आकार,स्वाद, बनावट आदि के आधार पर एक दुसरे से भिन्न होती है एवं इनके बाज़ार मूल्य में भी अंतर होता है, परन्तु यह जनसँख्या के एक बड़े भाग की पोषण की आवश्यकताओ की पूर्ति करता है, क्यूंकि छोटी मछलियाँ बड़ी मछलियों की तुलना में कम मूल्य पर उपलब्ध होती है इसलिए यह मूल्यवर्धन का अच्छा श्रोत बन सकता है।

मूल्यवर्धन क्यों?

मूल्यवर्धन के चार प्रमुख कारण हैं;

- उच्च लाभ के लिए।
- बेहतर प्रसंस्करण उपयोग के लिए।
- उपभोक्ताओं के साथ तालमेल रखने के लिए।
- विभिन्न प्रकार के उत्पाद प्रदान करना।
- मछली से बने विभिन्न मूल्यवर्धित उत्पाद

मछली का अचार

अचार बनाना एक पुरानी प्रथा है जो आमतौर पर भारतीय व्यंजनों के साथ खाया जाता है। परंपरागत रूप से, नींबू, अदरक, लहसुन, हरी मिर्च आदि सब्जियों के अचार को भोजन के साथ एक महत्वपूर्ण साइड डिश के रूप में उपयोग किया जाता है। हालांकि आजकल 'मछली का अचार' बहुत ही प्रचलन में है।

मछली के टुकडों को 2 प्रतिशत नमक व हल्दी के पाउडर में मिलाकर लगभग दो घंटे तक रखते हैं। फिर इसे कम तेल मे भूनकर रख लेते हैं। अन्य सामग्री मिर्च, अदरक, सरसों आदि को भूनतेहैं। इसमें मछली के टुकड़ों को अच्छी तरह मिला देते हैं। ठंडा होने पर सिरका, लौंग, इलाइची पाउडर, चीनी, बचा हुआ नमक आदि मिला देते हैं। इसको काँच के डिब्बे में रखकर एसिड प्रूफ ढक्कन से ढक देते हैं। नमी से बचाने के लिये अचार के ऊपर तक तेल की एक पतली परत बना देते हैं।

मछली का कटलेट

फिश–कटलेट कम कीमत वाली मछली से तैयार किए जाने वाले रेडी–टू–कुक मूल्य वर्धित मछली उत्पाद बहुत लोकप्रिय हैं। रेस्टोरेंट और फास्ट फूड सेंटर में

मात्स्यिकी महाविद्यालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वबिद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, 224229

इसकी अच्छी डिमांड है। 'फिश' कटलेट पोषक तत्वों से भरपूर होता है और उपभोक्ताओं के स्वाद के अनुकूल होता है। इसे मछली के मांस के साथ कई सामग्रियों को मिलाकर तैयार किया जाता है, इसके बाद आकार देने, बैटर और ब्रेडिंग की जाती है। कच्चे कटलेट को डीप फ्रीजर में रखा जा सकता है और आवश्यकता पड़ने पर तेल में तल कर गरमागरम परोसा जा सकता है। मछली की कोई भी बड़ी या मध्यम किस्म, अधिमानतः कम हड्डी वाली मछली का उपयोग 'फिश कटलेट' के लिए किया जा सकता है।

मछली के पकौड़े

सबसे पहले मछली को साफ कर 20–30 मिनट तक पानी में उबाल लेते हैं। मछली के शल्क, हड्डी, खाल आदि को निकालकर अलग कर देते हैं। फिर उबले हुये मांस मे नमक व हल्दी पाउडर को अच्छी तरह मिलाते हैं। प्याज को तेल में भून लिया जाता है। फिर उसमें मिर्च और अदरक को भी भून लेते हैं। साथ ही पके हुये मांस को अच्छी तरह मिला लेते हैं। उसके बाद उबले एवं कुचले हुये आलू को मसाले के साथ मिलाकर मत्स्य मांस के साथ मिला देते हैं। इस मिक्स्चर के 35–40 ग्राम के गोले बनाकर फेंटे हुये अण्डों में डुबोकर ब्रेड के चूरे में लपेटकर तेल में फ्राई कर लेते हैं।

मछली सूप पाउडर बनाने की विधि

मछली के मांस को उबलते हुये पानी में पका लेते हैं। मांस को हाथों से दबाकर पानी बाहर निकाल देते हैं। प्याज को तेल में भूनते हैं। इसके बाद मांस को एवं प्याज को मिक्सी में पीस लेते हैं। स्टार्च को इसमें मिलाते हैं एवं मिक्सी (ग्राइंडर) में फिर से पीसते हैं। अन्य अवयव भी मिलाकर पीसते हैं। पिसे हुये पेस्ट को एल्यूमीनियम की ट्रे में 0.5 सेंटी मीटर मोटी परत में रखकर 70 से 80 डिग्री सेल्सियस तापमान पर रखकर सुखाते हैं, जब तक कि नमी घटकर 10 प्रतिशत न रह जाये। सूखे हुये पदार्थ को पुनः पीसकर पाउडर के रूप में बनाते हैं एवं जिसको छानकर सूखे कांच की बोतल में १ वर्ष तक रख सकते है। तैयार किए हुए ५ ग्राम पाउडर को १० मिली लीटर ठन्डे पानी में मिला देते है एवं इसमे ६० मिली लीटर गरम पानी डालते है। इसके बाद १–२ मिनट तक खौलाते है।

फिश फिंगर्स

'फिश फिंगर्स' रेस्टुरेंट और फास्ट फूड सेंटर के लिए उपयुक्त हैं और यह मछली के मांस से बनाया हुआ कीमा का उपयोग करके तैयार किया जाता है। फिश फिंगर्स उंगली के आकार में काटा जाता है, अगर कीमा बनाया हुआ मांस इस्तेमाल किया जाता है, तो जमे हुए कीमा को उंगलियों के आकार में काटा जाता है। कच्चे फिश फिंगर्स' को आकार देने, और ब्रेडिंग के बाद कई सामग्रियों के साथ मिलाया जाता है। बैटर्ड और ब्रेडेड 'फिश फिंगर्स' को डीप फ्रीजर में रखा जा सकता है और आवश्यकता पड़ने पर तेल में तल कर गरमागरम परोसा जा सकता है। मछली की किसी भी बड़ी किस्म को जिसमे कम कांटे हो उसे 'फिश फिंगर्स' बनाने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है।

पूर्वाञ्चल खेती पढ़िये : खेती में आगे बढ़िये

- फसलोत्पादन, सब्जी उत्पादन, बागवानी, मत्स्य तथा पशुपालन विषय की वैज्ञानिक जानकारी देने वाली लोकप्रिय मासिक पत्रिका पूर्वाञ्चल खेती। चाहे प्रगतिशील किसान हों, बागवान हों या मत्स्य/पशुपालक, अनुसंधान/प्रसार कार्यकर्ता अथवा कृषि संकाय के छात्र तथा साथ ही साथ सभी के लिये उपयोगी आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, की हिन्दी मासिक पत्रिका पूर्वांचल खेती।
- पूर्वाञ्चल खेती की सदस्यता शुल्क रू0 270.00 मात्र (किसानों, छात्रों एवं लेखकों के लिए रू0 220.00 मात्र) है। जो निदेशक प्रसार, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या को मनीआर्डर/नकद भुगतान द्वारा प्रेषित किया जाना चाहिए। सदस्यता शुल्क भेजते समय अपना नाम व पता स्पष्ट अक्षरों में लिखना न भूलें। आपका सुझाव उत्तरोत्तर सुधार हेतु प्रार्थनीय है।

ठंड के मौसम में पशुओं का आवास एवं आहार प्रबन्धन

कबीर आलम* एवं सुशांत श्रीवास्तव**

भारत दुग्ध उत्पादन के क्षेत्र मे प्रथम स्थान रखता है एवं कृशि प्रधान देश है तथा यहा पर पशुपालन कृशि का एक महत्वपूर्ण अंग है जो कि देश की अर्थव्यवस्था में मुख्य भूमिका निभाता है। दुधारू पशुओ को ठण्ड से बचाने की विशेष आवश्यकता होती है। ठंड के मौसम में होने वाले परिवर्तन से पशुओं के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है, ऐसे में पशु प्रबंधन ठीक न होने पर पशुओ के उत्पादन क्षमता में गिरावट आ जाती है। ठंड के मौसम में पशुओं की दूध देने की क्षमता शिखर पर होती है तथा दूध की मांग भी बढ़ जाती है। यदि ठंड के मौसम में पशुओं के रहन–सहन और आहार का ठीक प्रकार से प्रबंध नहीं किया गया तो ऐसे मौसम में पशु के स्वास्थ्य व दुग्ध उत्पादन की क्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। पशुओ का भी अपना एक कम्फर्ट जोन (आरामदायक स्थिति) होता है ठण्ड के मौसम में तापमान में गिरावट आने के साथ–साथ पशुओ की शारीरिक स्थिति में बदलाव होने शुरू हो जाते है जिस कारण उनकी उत्पादन क्षमता कम हो जाती है जिसे कुछ बातो को ध्यान में रख कर बचाया जा सकता है।

पशुशाला की सफाई व्यवस्था

- पशु आवास को साफ–सुथरा एवं फर्श को सूखा रखना चाहिए।
- पशुशाला के दरवाजे और खिड़कियों को तिरपाल व टाट की मदद से ढक कर रखना चाहिए जिससे पशुओ को सीधे ठंडी हवाओ से बचाया जा सके।
- पशुशाला के फर्श को पराली या भूसे से ढक कर रखना चाहिए जिससे पशु को फर्श से आने वाली सीधी ठण्ड से बचाया जा सके। रेत या मैट्रेस का बिछावन पशुओं के लिए सर्वोत्तम माना गया है क्योंकि इसमें पशु दिनभर में 12–14 घंटे से अधिक आराम करते हैं, जिससे पशुओं की उर्जा कम क्षय होती है।
- गर्मी के लिए पशु के पास अलाव जला कर रखना चाहिए।
- पशुशाला में नमी होने से रोके तथा ऐसी व्यवस्था करे जिससे सूर्य की रोशनी पशु बाड़े में देर तक रहे।
- पशुशाला के फर्श को ढलान युक्त बनाना चाहिए जिससे पशु का मूत्र बहकर निकल जाये ताकि बिछावन सूखा बना रहे।
- पशुशाला में समय–समय पर डिसइन्फेक्शन का छिडकाव करना चाहिए।
- नवजात पशुओ को ठण्ड से बचने हेतु जूट के बोरे पहनाने चाहिए।
- गर्भित पशु एवं नवजात बच्चे को ठण्ड से बचाने हेतु बंद एवं सही बिछावन वाली जगह पर रखना चाहिए।

पशुओ की स्वास्थ्य व्यवस्था

- ठण्ड के मौसम में पशुओं को सुबह नौ बजे से पहले और शाम को पांच बजे के बाद पशुशाला से बाहर नहीं निकालना चाहिए।
- बछड़े–बछड़ियों को दिन के समय बाहर धूप में रखना चाहिए तथा कुछ समय के लिए उन्हें खुला छोड़ दें, ताकि वे दौड़–भाग कर स्फूर्तिवान हो जाएँ।
- पशुओ को आंतरिक (चपटे कृमि, फीता कृमि, गोल कृमि) एवं बाह्य परजीवियों (किलनी, मक्खी, चिचड़ी, मच्छर) से बचाने हेतु समय–समय पर कृमिनाशक औषधि देना चाहिए।
- बीमार पशु को स्वस्थ पशु से तुरंत अलग कर पशुचिकित्सक की मदद से शीघ्र ही उपचार करना चाहिए।
- पशुचकित्सक की मदद से पशुओ का टीकाकरण कराना चाहिए।

पशुओ की आहार व्यवस्था

पशु मादा रोग एवं प्रसूति विज्ञान विभाग आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौधोगिक विश्वविधालय, कुमारगंज अयोध्या उत्तर प्रदेश

- ठण्ड के मौसम में पशुओं को अपने शरीर के तापमान को बनाए रखने के लिए अतिरिक्त ऊर्जा की आवश्यकता होती है। ऊर्जा की कमी के कारण ठंड के मौसम में पशु का शरीर कांपता है, बीमारी और ठंढ लगने का खतरा रहता है । ठंड के समय पशुओं के भोजन में ऊर्जा का स्रोत बढ़ाएं जिससे दुधारू गाय और भैंसों को ठंड और बीमारी से बचाया जा सके।
- ठण्ड में रात के समय पशुओ को सूखा चारा ही खिलाना चाहिए जिससे उनके शरीर का तापमान संयमित रहता है।
- ठंड के मौसम में दुधारू पशुओं को सोयाबीन और बिनौला अधिक मात्रा में खिलाना चाहिए। बिनौला दूध के अंदर चिकनाई की मात्रा बढ़ाता है।
- पशुओ को दलहनी हरे चारे जैसे– लोबिआ, हरी बरसीम आदि खिलाना चाहिए, जिससे पशु के दुग्ध उत्पादन में वृद्धि होगी।
- नवजात पशु को खीज जरूर दे ताकि उनमे रोगो से लड़ने की क्षमता उत्तपन्न हो।
- पशु को अधिक सुपाच्य हरा चारा देना चाहिए।
- पशुओ को जहा तक संभव हो सके ताजा अथवा हल्का गर्म पानी पीने को देना चाहिए।
- पशु को प्रतिदिन 50 ग्राम मिनरल मिक्सचर (खनिज एवं लवण) चारे के साथ मिला कर खिलाना चाहिए।
- ठण्ड के मौसम में अधिकांश पशु गाभिन होते है इसलिए इनको संतुलित आहार ब्याने के दो माह पूर्व ही प्रारम्भ कर देना चाहिए। प्रसव के बाद माँ को गुनगुना पानी पिलाना चाहिए।

(पृष्ठ 25 का शेष)

इन समूहों मे अकुशल श्रमिक जिनके पास अपनी जमीन नहीं होती है। एसे समूह अचार मसाला, लघु उद्योग, कुटीर उद्योग जूट आदि कार्यों से धन अर्जित कर सकते हैं। स्वयं सहायता समूह छोटी पूंजी से छोटे रोजगार शुरू कर सकते है। और उत्पादकता बढ़ाने के लिए सहकारी या सरकारी बैंकों से छोटे कर्ज लेकर उत्पादकता बढ़ाकर धन अर्जित कर सकते हैं।

1. महिला किसान सशक्तिकरण परियोजना

महिला किसानों की बढ़ती हुई संख्या को देखते हुए महिला किसान सशक्तिकरण परियोजना के द्वारा कृषि से जुड़ी महिलाओं की वर्तमान स्थिति में सुधार करने और उन्हें सशक्त बनाने के लिए इसकी शुरूआत की गई है। इस योजना का उद्देश्य महिलाओं को कृषि में अधिकार संपन्न बनाना है।

2. महिला किसान योजना

यह योजना रू0 50,000 तक की लागत वाली परियोजना के लिए कृषि अथवा मिश्रित खेती करने के लिए केवल ग्रामीण कृषक महिलाओं के लिए है। इस कर्ज को अधिकतम 10 वर्षों में तिमाही किश्तों में जमा कर सकते हैं। इसके अलावा ग्रामीण महिलाओं के लिए अन्य बहुत सी योजनाएं चल रही है जिसको अपनाकर कर्ज प्राप्त कर सकती है। जैसे–जिला उद्योग केन्द्र, महिला एवं बाल विकास संस्थान, महिला कल्याण विभाग, टर्म लोन, महिला समृद्धि योजना, महिला किसान योजना, शिल्पी समृद्धि योजना, लघु व्यवसाय केन्द्र सरकार ने एक राष्ट्रीय अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम की स्थापना की है। जहां से अनुसूचित जाति की महिलाएं कर्ज प्राप्त कर सकती है।

प्रदेश एंव केन्द्र सरकारों का मुख्य उद्धेश्य है कि निर्धन वर्ग की ग्रामीण कृषक महिलाओं को आर्थिक सम्बल प्रदान किया जाए इसके लिए ग्रामीण महिलाओं पर बहुत ध्यान दे रही है केन्द्र सरकार देश से गरीबी को समाप्त करना चाहती है। उनकी आय बढ़ाने वाले लघु एवं कुटीर उद्यम लगाने हेतु प्रोत्साहन दे रही है। छोटी बचत को प्रोत्साहित करना एवं वक्त जरूरत के लिए धन अर्जित करना आदि कार्यों को सरकार बढ़ावा दे रही है ताकि देश में ग्रामीण कृषक महिलाओं की व्यक्तिगत जीवन में आर्थिक रूप से प्रगति हो और समाज, प्रदेश व देश खुशहाल हो सके।

दिसम्बर माह में किसान भाई क्या करें

फसलों में

डॉ. सौरभ वर्मा
सह प्राध्यापक (सस्य विज्ञान)

(1) समय से बोये गये गेहूँ में पहली सिंचाई ताजमूल अवस्था में 20–25 दिन पर करें।

(2) गेहूँ में चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार के नियंत्रण के लिए 675 ग्राम 2,4 डी सोडियम सॉल्ट 80 प्रतिशत घुलनशील चूर्ण तथा गेहूँसा के लिए 75 प्रतिशत आइसोप्रोट्यूरान 1.50 किग्रा को 600 से 800 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर चपटे नॉजिल वाले स्प्रेयर से बुवाई के 30–35 दिन पर छिड़काव करें।

(3) चना, मटर तथा मसूर में 45–60 दिन पर सिंचाई करें।

(4) लाही में दाना पड़ने पर तथा राई में फूल आने की अवस्था पर सिंचाई करें।

सब्जी एवं उद्यान में

डॉ. शशांक सिंह
विषय वस्तु विशेषज्ञ, उद्यान

(1) नवम्बर के अन्तिम सप्ताह में हल्की सिंचाई के बाद फूलगोभी एवं पातगोभी में नत्रजन की आधी मात्रा डालकर मिट्टी चढ़ा दें।

(2) नवम्बर के प्रथम पखवारे में जो आलू बोये गये हैं उसमें माह के प्रथम पक्ष मे हल्की सिंचाई करके नत्रजन की आधी मात्रा देकर मिट्टी चढ़ा दें।

(3) नवम्बर में डाली गयी पूसा रेड या नासिक रेड प्याज की पौध की रोपाई माह के दूसरे पक्ष में 15 गुणा 10 सेमी की दूरी पर 20 टन सड़ी गोबर की खाद तथा 50:50:80 ना.फा.पो. प्रति हेक्टेयर डालकर करें।

(4) नये बागों में थालों की निराई–गुड़ाई करके उचित नमी बनाये रखने के लिए 10–15 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करते रहें। पाला से बचाने के लिए घास–फूस की ठठरी बनाकर तीन तरफ से ढक दें।

(5) अंगूर की बाग लगाने के लिए पंक्ति से पंक्ति तथा पौधे से पौधे की दूरी 2–3 मीटर रखकर 60 गुणा 60 गुणा 60 सेमी आकार के गड्ढे खोद लें। गड्ढों को 15–20 दिन खुला छोड़ने के बाद खाद तथा मिट्टी को समान मात्रा में 50–100 ग्राम बीएचसी तथा 0.5 से 1 किग्रा सुपरफास्फेट डालकर सिंचाई करें

पौध संरक्षण

डॉ. वी. पी. चौधरी एवं डॉ. पंकज कुमार
सहायक प्राध्यापक (पादप सुरक्षा)

(1) तिलहन में झुलसा एवं सफेद गेरुई रोग के नियंत्रण के लिये जिंक कार्बामेट की 2 किग्रा मात्रा 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें।

(2) आलू तथा टमाटर में पिछेती झुलसा रोग के नियंत्रण के लिए मैंकोजेब 2.5 किग्रा मात्रा को 800–1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें।

(3) आम एवं कटहल के पौधों में मिलीबग के नियंत्रण के लिए तने की एक मीटर ऊँचाई तक 30 सेमी चौड़ी तथा 400 गेज मोटी पॉलीथीन की पट्टी बाँधकर किनारे पर मिट्टी या ग्रीस से चिपका दें।

पशुपालन

डॉ. सुरेन्द्र सिंह
विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु विज्ञान)

(1) सर्दी का मौसम भैंस के लिए गर्भाधान हेतु उत्तम होता है। अतः मादा भैंसों में गर्भाधान हेतु उत्तम नस्ल के नर भैंसों का प्रयोग करें।

(2) प्रत्येक पशुपालक को दुधारू पशुओं तथा उनकी संतति के उत्तम रख–रखाव हेतु खिड़कियों एवं दरवाजों पर टाट अथवा बोरे के पर्दे लगाना चाहिए तथा बाँधने वाले स्थान पर पुआल का बिछावन प्रयोग करें।

(3) भेड़ों और बकरियों में प्रसूति काल चल रहा है इस पर विशेष ध्यान रखा जाये।

(4) भैसों में इस समय दूध उत्पादन का सर्वोत्तम काल चल रहा है। अतः इस समय थनैला रोग लगने की संभावना रहती है। अतः उनके थन को हमेशा स्वच्छ रखें तथा चोट आदि से बचाव किया जाय तथा उनका दूध यथा शीघ्र पूरी मात्रा में निकाल लिया जाय।

(5) अधिक अण्डा उत्पादन बनाए रखने हेतु अनुत्पादक मुर्गियों की छँटनी कर दिया जाय।

(6) ब्रायलर पालक एक दिवसीय चूजों की ब्रूडिंग पर विशेष ध्यान देकर तापमान का उचित निर्धारण करें जिससे सर्दी से होने वाली मृत्यु को रोका जा सके तथा खिड़कियों पर टाट अथवा बोरे का पर्दा लगाकर सदी से बचाव करें।

संकलनकर्ता : डॉ. आर.आर. सिंह, प्राध्यापक, प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उ.प्र.

प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के

प्रश्न : आलू की फसल में कौन–कौन से रोग लगते हैं?

(श्री बाबा दीन निषाद, खण्डासा, जनपद अयोध्या)

उत्तर : आलू की फसल में मुख्यता अंगमारी काला कोढ़, जीवाणुज, मृदु गलन, सामान्य स्कैब, मोजैक, लीफ रोल आदि लगते हैं। आलू में बुवाई 40 दिन बाद प्रायः अगेती अंगमारी का आक्रमण होता है। पत्तियों पर काले धब्बे जिनमें चूड़ीदार गड़रियाँ (रिंग) दिखाई पड़ती हैं। प्रकोप अधिक होने पर कई धब्बे आपस में मिलकर विकराल रूप धारण कर लेती हैं। पिछेती अंगमारी (झुलसा) देर से आरम्भ होती है। दिसम्बर या जनवरी के महीने में जब तापमान नीचे जाता है और नमी 60 प्रतिशत से अधिक हो जाती है एवं आकाश में बादल छाये रहते हैं या हल्की वर्षा होती रहती है ऐसी अवस्था में यह रोग भयंकर रूप धारण करता है। पत्तियों पर नोक या किनारे से जल सिक्त धब्बे बनते हैं और अनुकूल वातावरण होने पर सम्पूर्ण पौधा तीन–चार दिन में समाप्त हो जाता है। ऐसे समय वर्षा होने से मिट्टी कन्दों पर से हट जाता है और बीमारी का आक्रमण कन्दों तक हो जाता है जिसके कारण कन्दों के ऊपर कत्थई रंग के धब्बे बनते हैं।

प्रश्न : बटेर मुर्गियाँ अण्डा कब देना शुरू करती हैं तथा साल में कितने अण्डे देती हैं?

(श्री तौफीक, जगदीशपुर, अमेठी)

उत्तर : बटेर मुर्गियाँ छः सप्ताह की आयु में अण्डा उत्पादन करने योग्य हो जाती हैं। इनसे 6–7 सप्ताह की आयु में 50 प्रतिशत तथा 6–10 सप्ताह की आयु में 80 प्रतिशत अण्डा उत्पादन किया जा सकता है। अच्छी देखभाल करके बटेर से 250–300 अण्डे प्रति वर्ष प्राप्त किया जा सकता है। अण्डे का औसत भार 11 ग्राम होता है।

प्रश्न : प्रायः खेतों में आलू के कन्द गलने लगते हैं क्या करना चाहिए?

(श्री भवानी प्रसाद दुबे, तिरहुत, सुल्तानपुर)

उत्तर : इसमें कन्द का विगलन होता है। यह गलन फसल की खुदाई के समय दिखाई पड़ती है। यदि अन्य निकटवर्ती कन्द गलने लगें तो यह जीवाणु मृदु गलन का सूचक है। बोने से पहले कटे पिटे कन्दों को कभी भी प्रयोग में न लायें साथ ही बीजोपचार करना न भूलें। जिस खेत में पहले वाली फसल में यह बीमारी आई हो उसमें फिर फसल न लें।

लेखकों से अनुरोध

- लेख भेजने से पहले यह सुनिश्चित कर लें कि आप पूर्वांचल खेती की वार्षिक सदस्यता ग्रहण कर लिए हैं, जो रूपया दौ सौ बीस (220.00) मात्र ही देय होगा। एक लेख में जितने भी लेखक होंगे सभी की सदस्यता अनिवार्य होगी।
- लेख भेजते समय पूर्वांचल खेती की सदस्य संख्या तथा सदस्यता अवधि सभी लेखकों को लेख के ऊपर लिखना अनिवार्य होगा।
- लेख फसलोत्पादन, सब्जी उत्पादन, बागवानी, गृह विज्ञान, मत्स्य अथवा पशुपालन आदि विषयों पर आधारित हो।
- लेख दो प्रतियों में डबल स्पेस में टाइप हो।
- लेख आकर्षक एवं अपने में ठोस हो।
- लेख आँकड़े से भरपूर हो।
- सम्बन्धित माह तथा मौसम की जानकारी से छः माह पूर्व प्रेषित हो।

प्रधान सम्पादक

पंजीयन संख्या - 54461/91

डाक पंजीयन संख्या एल. डब्लू./एन.पी. 34

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या – 224 229

द्वारा

कृषि तकनीकी सूचना केन्द्र

के अन्तर्गत प्रकाशित ग्रामोपयोगी पुस्तकें

पुस्तक	मूल्य रु.
आधुनिक मधुमक्खी पालन एवं प्रबन्ध	20.00
जिमीकन्द की खेती	15.00
मशरूम उत्पादन एवं उपयोगिता	12.00
किसानोपयोगी फसल सुरक्षा तकनीक	50.00
फसल उत्पादन तकनीक	35.00
जीरो टिल सीड कम फर्टी ड्रिल	10.00
फल–सब्जी परीरक्षण एवं मानव आहार	50.00
गन्ने की आधुनिक खेती	15.00
जीरो टिलेज गेहूँ बुवाई की एक विश्वसनीय तकनीक	20.00
केचुआ पालन (वर्मीकल्चर) एवं वर्मी कम्पोस्ट उत्पादन	10.00
व्यावसायिक कुक्कुट (ब्रायलर) उत्पादन	20.00
फसलों के सूत्रकृमि रोग एवं उनका वैज्ञानिक प्रबन्धन	25.00
आय संवर्धन हेतु प्रमुख सब्जियों की उत्पादन तकनीक	25.00
गृहणियों के लिए बेकिंग कला	25.00
स्वच्छ दूध उत्पादन तकनीक एवं उसका महत्व	20.00
गायों एवं भैसों के मुख्य रोग, टीकाकरण एवं संतुलित पशु आहार	20.00
मछली पालन	40.00
फसल अवशेष प्रबंधन	30.00

प्रति रूपये 25/–मात्र

मुद्रित

सेवा में,
श्री/श्रीमती

प्रेषक:
प्रसार निदेशालय
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या – 224 229

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या की ओर से प्रो. ए.पी. राव निदेशक प्रसार द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित